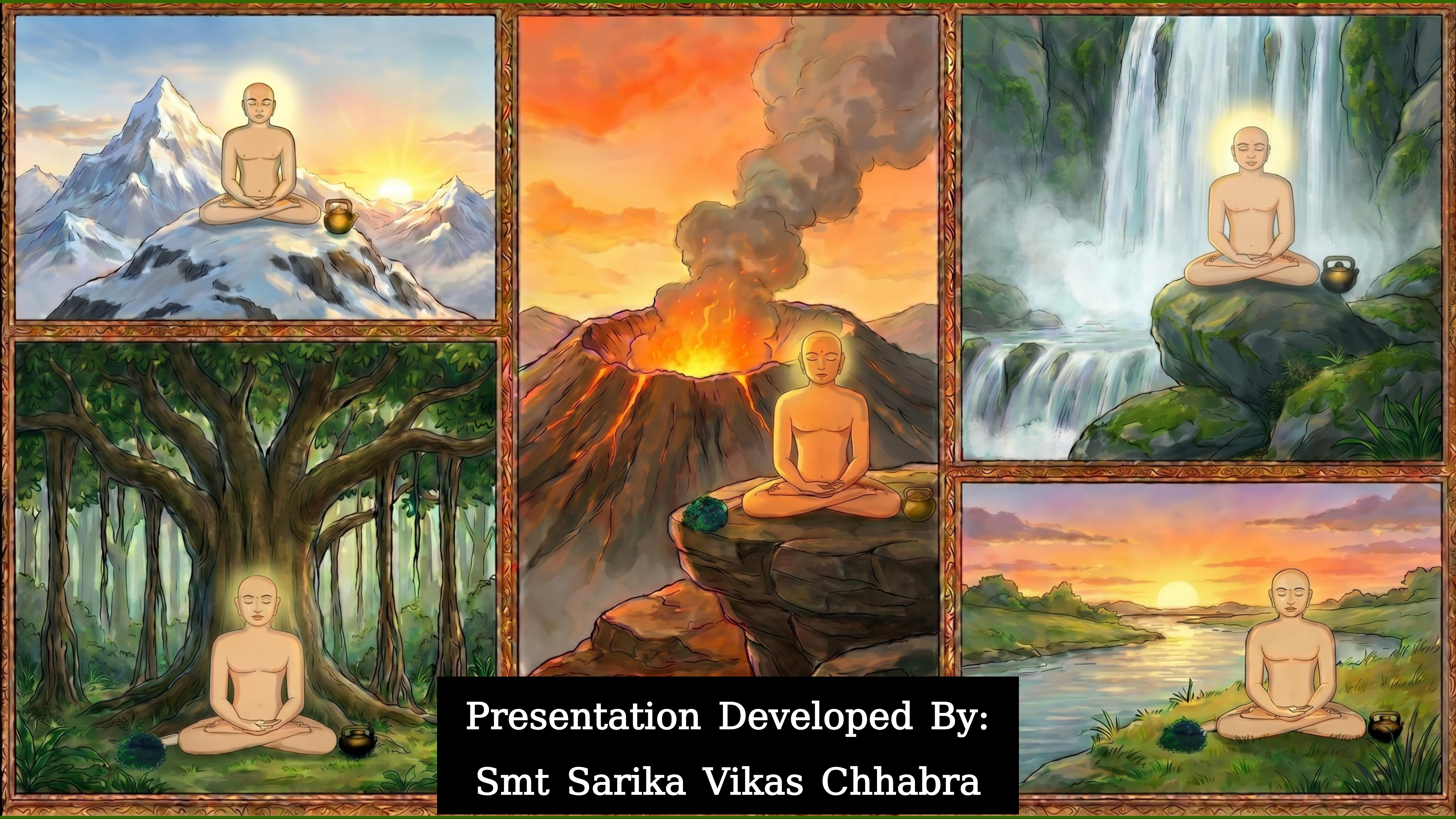

Presentation Developed By:
Smt Sarika Vikas Chhabra

मंगलाचरण

सिद्धे जिणिंदचंदे, आयरिय-उवज्झाय-साहुगणे ।
वंदिय सम्मद्दंसण-चरित्तलद्धिं परूवेमो ॥1॥

अणियट्टिस्स य पढमे, अण्णं ठिदिखंडपहुदिमारभई ।
उवसामणा णिधत्ती, णिकाचणा तत्थ वोच्छिण्णा ॥412॥

- अन्वयार्थ: (अणियट्टिस्स) अनिवृत्तिकरण के (पढमे) प्रथम समय में (अण्णं ठिदिखंडपहुदि) अन्य स्थितिकाण्डकादि (अनुभागकांडक, स्थिति-बंध) (आरभई) प्रारंभ करता है ।
- (य) और (तत्थ) वहाँ (उवसामणा णिधत्ती णिकाचणा) उपशान्तकरण, निधत्तिकरण और निकाचनाकरण (वोच्छिण्णा) व्युच्छिन्न (नष्ट) होते हैं ॥412॥

www.JainKosh.org

अनिवृत्तिकरण

इस प्रकार अंतर्मुहूर्त काल द्वारा अपूर्वकरण को बिताकर विशुद्ध जीव अनिवृत्तिकरण गुणस्थान को प्राप्त करता है ।

अनिवृत्तिकरण में प्रवेश करने पर नवीन स्थितिकांडक, अनुभागकांडक, स्थितिबंधापसरण प्रारंभ होते हैं ।

अपूर्वकरण के अंतिम समय में अप्रशस्त उपशामना, निधत्ति, निकाचितकरण की व्युच्छित्ति हो जाती है ।

अतः अनिवृत्तिकरण में प्रवेश करते ही सर्व अप्रशस्त उपशम, निधत्ति, निकाचित करण समाप्त हो जाते हैं ।

जिस कर्म परमाणु की

उदीरणा → उपशान्त

उदीरणा, संक्रमण → निधत्ति

उदीरणा, संक्रमण, अपकर्षण, उत्कर्षण → निकाचना

संभव ना हो, उसे कहते हैं –

एक ही निषेक के कर्म परमाणुओं में उपशांत, निधत्ति, निकाचना के परमाणु होते हैं ।

कुछ परमाणु उपशांत, कुछ निधत्ति, कुछ निकाचना रूप पाये जाते हैं ।

बादरपढमे पढमं, ठिदिखंडं विसरिसं तु बिदियादि। ठिदिखंडयं समाणं, सव्वस्स समाणकालम्हि ॥413॥

- अन्वयार्थ: (बादरपढमे) अनिवृत्तिकरण के प्रथम समय में (पढमं ठिदिखंडं) प्रथम स्थितिकांडक (विसरिसं) विसदृश होता है अर्थात् नाना जीवों के समान नहीं होता है,
- (तु) परन्तु (बिदियादि) द्वितीयादि (ठिदिखंडयं) स्थितिकांडक (समाणकालम्हि) समान काल में (सव्वस्स) सभी जीवों के (समाणं) समान होते हैं ॥413॥

www.JainKosh.org

स्थितिकांडक के आयाम

अनिवृत्तिकरण के प्रथम समय में नाना जीवों की अपेक्षा स्थितिकांडक-आयाम विसदृश होता है ।

परंतु द्वितीय आदि कांडक आयाम सब जीवों के सदृश ही होते हैं ।

पल्लस्स संखभागं, अवरं तु वरं तु संखभागहियं ।
घादादिमठिदिखंडो, सेसा सव्वस्स सरिसा हु ॥414॥

- अन्वयार्थ: (घादादिमठिदिखंडो) प्रथम स्थितिकांडक का (अवरं तु) जघन्य आयाम तो (पल्लस्स संखभागं) पल्य का संख्यातवां भाग है, (तु वरं) परन्तु उत्कृष्ट स्थितिकांडक; जघन्य से (संखभागहियं) संख्यातवां भाग अधिक है।
- (सेसा) शेष स्थितिकांडक (सव्वस्स) सभी के (सरिसा हु) सदृश हैं ॥414॥

अनिवृत्तिकरण में प्रथम स्थितिकांडक का प्रमाण

जघन्य

पल्य/संख्यात

उत्कृष्ट

- $\text{जघन्य} + \dfrac{\text{जघन्य}}{\text{संख्यात}} =$ पल्य/संख्यात

यहाँ जघन्य कांडक-आयाम से उत्कृष्ट कांडक-आयाम संख्यात भाग अधिक है ।

प्रश्न- संख्यात भाग अधिक ही क्यों है ? संख्यात गुणा क्यों नहीं है ?

उत्तर – सत्कर्म के अनुसार कांडक का आयाम होता है । यहाँ नाना जीवों की अपेक्षा जघन्य सत्कर्म से उत्कृष्ट सत्कर्म संख्यात भाग अधिक ही है, संख्यात गुणा नहीं । इसलिए सत्कर्म के अनुसार प्रवर्तने वाला कांडक-आयाम भी संख्यात भाग अधिक मात्र है ।

www.JainKosh.org

प्रश्न- अपूर्वकरण में तो संख्यात गुणा सत्त्व कहा था ?

उत्तर- हाँ, अपूर्वकरण के प्रारंभ में स्थितिघात नहीं हुआ होने से जघन्य से उत्कृष्ट सत्त्व संख्यात गुणा था ।

परंतु पूरे अपूर्वकरण में हजारों कांडकघात होने से अनिवृत्तिकरण के प्रारंभ में स्थिति-सत्त्व संख्यात भाग अधिक ही शेष रहा ।

प्रथम कांडक के पश्चात् द्वितीयादि कांडकों का प्रमाण समान होता है क्योंकि समान काल में विद्यमान सभी जीवों का स्थिति-सत्त्व सदृश होता है ।

www.JainKosh.org

उदधिसहस्सपुधत्तं, लक्खपुधत्तं तु बंध संतो य ।
अणियट्टिस्सादीए, गुणसेढी पुव्वपरिसेसा ॥415॥

- अन्वयार्थ: (अणियट्टिस्सादीए) अनिवृत्तिकरण के प्रथम समय में (बंध) स्थिति-बंध (उदधिसहस्सपुधत्तं) पृथक्त्व हजार सागर (य) और (संतो) स्थिति-सत्त्व (लक्खपुधत्तं) पृथक्त्व लक्ष सागर है ।
- (गुणसेढी) गुणश्रेणी (पुव्वपरिसेसा) अपूर्वकरण में प्रारंभ की हुई गुणश्रेणी में से जितनी शेष रही उतनी होती है ॥415॥

अनिवृत्ति करण के प्रारंभ में बंध, सत्त्व

बंध	सत्त्व
अंत:लक्ष सागर (पृथक्त्व हजार सागर)	अंत:कोटी सागर (पृथक्त्व लक्ष सागर)

गुणश्रेणी गलितावशेष होने से जो शेष बची है उतने प्रमाण वाली शेष है ।

www.JainKosh.org

ठिदिबंधसहस्सगदे, संखेज्जा बादरे गदा भागा ।
तत्थासण्णिस्स ट्ठिदिसरिसं ठिदिबंधणं होदि ॥416॥

- **अन्वयार्थ: इस प्रकार (ठिदिबंधसहस्सगदे) संख्यात हजार स्थिति-बंध होने पर (बादरे) अनिवृत्तिकरण में (संखेज्जा भागा) संख्यात बहुभाग (गदा) व्यतीत हुआ ।**
- **(तत्थ) वहाँ (असण्णिस्स ट्ठिदिसरिसं) असंज्ञी के स्थिति-बंध के समान (ठिदिबंधणं) स्थिति-बंध (होदि) होता है ॥416॥**

स्थिति बंधापसरण

अध:प्रवृत्तकरण से ही स्थितिबंधापसरण चल रहा है । वह यहाँ भी प्रवृत्त हो ही रहा है।

अनिवृत्तिकरण के प्रथम समय से प्रत्येक अंतर्मुहूर्त में पल्य/संख्यात भाग प्रमाण स्थिति-बंध घटता है ।

अनिवृत्तिकरण का संख्यात बहुभाग बीतने पर ऐसे हजारों स्थितिबंधापसरण होने पर स्थिति-बंध घटते हुए असंज्ञी के स्थिति-बंध जितना होने लगता है ।

असंज्ञी सदृश स्थिति-बंध

कर्म	स्थिति-बंध
नाम-गोत्र	1000 सागर $\times \frac{2}{7}$
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय, साता वेदनीय	1000 सागर $\times \frac{3}{7}$
चारित्र मोहनीय	1000 सागर $\times \frac{4}{7}$

यह $\frac{2}{7}, \frac{3}{7}, \frac{4}{7}$ का विभाग आगे भी इसी प्रकार जानना ।

ठिदिबंधसहस्सगदे, पत्तेयं चदुरतियबिएइंदी ।
ठिदिबंधसमं होदि हु, ठिदिबंधमणुक्कमेणेव ॥417॥

- अन्वयार्थ: (पत्तेयं) प्रत्येक स्थान में (ठिदिबंधसहस्सगदे) संख्यात हजार स्थिति-बंध जाने पर (अणुक्कमेणेव) क्रम से ही (चदुरतियबिएइंदी ठिदिबंधसमं) चतुरिन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकेन्द्रिय जीवों के स्थिति-बंध के समान (ठिदिबंधं) स्थिति-बंध (होदि हु) होता है ॥417॥

स्थितिबंधापसरण

अनिवृत्तिकरण का संख्यात बहुभाग बीतने पर सातों कर्मों का स्थिति-बंध घट-घटकर क्रमशः इस प्रकार हो जाता है-

www.JainKosh.org

एइंदियट्ठिदीदो, संखसहस्से गदे हु ठिदिबंधे ।
पल्लेकदिवड्ढदुगं, ठिदिबंधो वीसियतियाणं ॥418॥

- अन्वयार्थ: (एइंदियट्ठिदीदो) एकेन्द्रिय-समान स्थिति-बंध से लेकर आगे (संखसहस्से गदे हु ठिदिबंधे) संख्यात हजार स्थिति-बंध व्यतीत होने पर (वीसियतियाणं) वीसियत्रिक का अर्थात् वीसिय, तीसिय और चालीसिय का (ठिदिबंधो) स्थिति-बंध क्रम से (पल्लेकदिवड्ढदुगं) एक पल्य, डेढ़ पल्य और दो पल्य होता है ॥418॥

इसके आगे संख्यात हजारों स्थितिबंधापसरण होने पर एक पल्य प्रमाण बंध होता है ।

नाम-गोत्र

- 1 पल्य

तीसीय

- $\frac{3}{2}$ पल्य

चालीसीय

- 2 पल्य

ऐसा किस प्रकार आया ? उत्तर- कर्म के अनुपात अनुसार आया है ।

जैसे 20 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का बंध = 1 पल्य

तो 40 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का बंध = $\frac{1 \text{ पल्य}}{20 \text{ कोड़ाकोड़ी सागर}} \times$ 40 कोड़ाकोड़ी सागर

$= \frac{1 \text{ पल्य}}{2} \times 4 = 1$ पल्य $\times 2 = 2$ पल्य

इसी प्रकार सर्वत्र जान लेना चाहिए ।

तक्काले ठिदिसंतं, लक्खपुधत्तं तु होदि उवहीणं ।
बंधोसरणा बंधं, ठिदिखंडं संतमोसरदि ॥419॥

- अन्वयार्थ: (तक्काले) उस समय (कर्मों का) (ठिदिसंतं) स्थिति-सत्त्व (उवहीणं लक्खपुधत्तं) लक्षपृथक्त्व सागर प्रमाण (होदि) होता है।
- (बंधोसरणा) बन्धापसरण (बंधं) बन्ध को (ओसरदि) कम करता है और (ठिदिखंडं) स्थितिकांडक (संतं) सत्त्व को (ओसरदि) कम करता हैं ॥419॥

स्थिति -सत्त्व

जब नाम-गोत्र का पल्य प्रमाण बंध होता है, तब अनिवृत्तिकरण में आयु को छोड़कर शेष 7 कर्मों का सत्त्व लक्ष पृथक्त्व सागर प्रमाण रह जाता है ।

यह सत्त्व का घटना स्थितिकांडक घात से होता है तथा बंध का घटना स्थितिबंधापसरण से होता है ।

यहाँ भी बंध से सत्त्व संख्यात गुणा है ।

पल्लस्स संखभागं, संखगुणूणं असंखगुणहीणं । बंधोसरणं पल्लं, पल्लासंखं ति संखवस्सं ति ॥420॥

- अन्वयार्थ: (पल्लं ति) पल्य प्रमाण स्थिति-बंध होने तक (बंधोसरणं) बन्धापसरण (पल्लस्स संखभागं) पल्य का संख्यातवाँ भाग होता है।
- (पल्लासंखं ति) पल्य का असंख्यातवाँ भाग स्थिति-बंध प्राप्त होने तक (संखगुणूणं) पूर्व स्थिति-बंध की अपेक्षा संख्यातगुणा हीन स्थिति-बंध होता है।
- (संखवस्सं ति) संख्यात वर्ष प्रमाण स्थिति-बंध होने तक पूर्व स्थिति-बंध की अपेक्षा (असंखगुणहीणं) असंख्यातगुणा हीन स्थिति-बंध होता है ॥420॥

बंधस्थान में स्थितिबंधापसरण का प्रमाण

बंधस्थान	स्थिति-बंध	स्थितिबंधापसरण का प्रमाण
अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से पल्य	संख्यात पल्य	$\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$
पल्य से दूरापकृष्टि पर्यंत	$\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$	बंध का संख्यात बहुभाग
दूरापकृष्टि से संख्यात वर्ष प्रमाण पर्यंत	$\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$	बंध का असंख्यात बहुभाग
संख्यात वर्ष से 32 वर्ष	संख्यात वर्ष	बंध का संख्यात बहुभाग
32 वर्ष से अंतर्मुहूर्त	32 वर्ष–	अंतर्मुहूर्त

एवं पल्लं जादा, वीसिया तीसिया य मोहो य ।
पल्लासंखं च कमं, बंधेण य वीसियतियाओ ॥421॥

- अन्वयार्थः (एवं) इस प्रकार (पल्लं जादा) पल्य प्रमाण स्थिति-बंध हुआ।
- वहाँ (वीसिया तीसिया और मोहो य) वीसिय, तीसिय और मोह – ऐसा (बंधेण कमं) बंध की अपेक्षा से क्रम है।
- (च) और (पल्लासंखं) पल्य का असंख्यातवां भाग स्थिति-बंध होने तक भी (वीसिय-तियाओ बंधेण कमं) वीसियत्रिक का बंध की अपेक्षा से यही क्रम है ॥421॥

पल्य प्रमाण स्थिति-बंध होने के पश्चात् और स्थितिबंधापसरण होते हैं, जिससे कर्मों का स्थिति-बंध क्रमशः इस प्रकार होता है

वीसीय	तीसीय	चालीसीय
पल्य	पल्य $\times \frac{3}{2}$	पल्य $\times$ 2
पल्य/संख्यात	पल्य	पल्य $\times \frac{4}{3}$
पल्य/संख्यात	पल्य/संख्यात	पल्य
दूरापकृष्टि	पल्य/संख्यात	पल्य/संख्यात
पल्य/असंख्यात	दूरापकृष्टि	पल्य/संख्यात
पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	दूरापकृष्टि
पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात

दूरापकृष्टि

$\frac{\text{पल्य}}{\text{जघन्य परीत असंख्यात}}$ से $\frac{\text{पल्य}}{\text{उत्कृष्ट संख्यात}}$ के बीच में जो एक-एक राशि है, वह दूरापकृष्टि कहलाती है ।

यह अनेकों भेद वाली है । उनमें से कोई एक भेद जो जिनेंद्र भगवान के द्वारा देखा गया है वह यहाँ पर दूरापकृष्टि जानना चाहिए ।

उदाहरण – माना कि पल्य, 960, उत्कृष्ट संख्यात = 15, जघन्य परीत असंख्यात = 16

तो $\frac{\text{पल्य}}{\text{जघन्य परीत असंख्यात}} = \frac{960}{16} = 60$ से $\frac{\text{पल्य}}{\text{उत्कृष्ट संख्यात}} = \frac{960}{15} = 64$ के बीच के जो विकल्प हैं

अर्थात् 61, 62, 63 – ये तीन 60 और 64 के बीच के विकल्प हैं ।

इन्हें ही दूरापकृष्टि कहते हैं ।

इसी प्रकार वास्तविक संख्या में जानना ।

स्थितिबंधापसरण

जहाँ वीसीय का पल्य प्रमाण बंध है, वहाँ तीसीय का डेढ़ गुणा याने 1.5 पल्य प्रमाण बंध है, तथा वहीं चालीसीय का दुगुना याने 2 पल्य प्रमाण बंध है ।

पल्य प्रमाण स्थिति-बंध से पल्य के संख्यात बहुभाग का अपसरण होता है, पल्य/संख्यात मात्र बंध होता है । अत: वीसीय का पल्य/संख्यात बंध होता है । शेष कर्मों का पल्य/संख्यात का अपसरण होकर शेष का बंध होता है ।

हजारों अपसरणों के हो जाने पर तीसीय का बंध भी पल्य प्रमाण हो जाता है । इसी समय चालीसीय का बंध एक तिहाई भाग अधिक होता है क्योंकि तीसीय से चालीसीय एक तिहाई अधिक है । अत: यहाँ चालीसीय का बंध पल्य + पल्य × $\frac{1}{3}$ = पल्य × $\frac{4}{3}$ होता है ।

स्थितिबंधापसरण

इसके आगे वीसीय, तीसीय का बंध पल्य/संख्यात होता है । परंतु वीसीय से तीसीय का बंध संख्यात गुणा है । चालीसीय का यथायोग्य साधिक पल्य प्रमाण बंध होता है ।

हजारों अपसरण जाने पर चालीसीय का बंध भी पल्य प्रमाण हो जाता है ।

इसके पश्चात् हजारों अपसरण होने पर वीसीय का अंतिम पल्य/संख्यात भागमात्र दूरापकृष्टिरूप बंध होता है । शेष कर्मों का पल्य/संख्यात प्रमाण बंध होता है । दूरापकृष्टि बंध से आगे उस प्रकृति का बंधापसरण असंख्यात बहुभाग होता है ।

स्थितिबंधापसरण

इसके पश्चात् हजारों अपसरण होने पर वीसीय का पल्य/असंख्यात प्रमाण बंध होता है। तीसीय का दूरापकृष्टि प्रमाण बंध प्राप्त होता है। उस समय चालीसीय का पल्य/संख्यात प्रमाण बंध होता है।

इसके पश्चात् हजारों अपसरण हो जाने पर चालीसीय का भी बंध दूरापकृष्टि प्रमाण प्राप्त हो जाता है। इसी स्थान पर वीसीय, तीसीय कर्मों का बंध पल्य/असंख्यात होता है। परंतु वीसीय से तीसीय का बंध असंख्यात गुणा होता है।

इसके आगे हजारों अपसरण होने पर सारे ही कर्मों का बंध पल्य/असंख्यात प्रमाण होता है। परंतु वीसीय से तीसीय का बंध असंख्यात गुणा है, तीसीय से चालीसीय का बंध असंख्यात गुणा है।

उदधिसहस्सपुधत्तं, अब्भंतरदो दु सदसहस्सस्स ।
तक्काले ठिदिसंतो, आउगवज्जाण कम्माणं ॥422॥

- अन्वयार्थ: (तक्काले) उस काल में (आउगवज्जाण कम्माणं) आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों का (ठिदिसंतो) स्थिति-सत्त्व (सदसहस्सस्स अब्भंतरदो दु) एक लाख सागरोपम के अंदर (उदधिसहस्सपुधत्तं) हजार सागरोपम पृथक्त्व प्रमाण होता है ॥422॥

स्थिति-सत्त्व

इस स्थान पर सातों कर्मों का स्थिति-सत्त्व एक लाख सागर से नीचे हजार पृथक्त्व सागर प्रमाण होता है ।

इसे अंत:लक्ष सागर कहा जाता है ।

मोहगपल्लासंखट्ठिदिबंधसहस्सगेसु तीदेसु ।
मोहो तीसिय हेट्ठा, असंखगुणहीणयं होदि ॥423॥

- अन्वयार्थ: (मोहगपल्लासंखट्ठिदिबंधसहस्सगेसु तीदेसु) मोहनीय के पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण हजारों स्थिति-बंध व्यतीत होने पर (मोहो) मोहनीय का स्थिति-बंध (तीसिय हेट्ठा) तीसिय के नीचे (असंखगुणहीणयं) असंख्यात गुणा हीन (होदि) होता है ॥423॥

www.JainKosh.org

क्रम करण

इस प्रकार तीनों ही कर्मों का पल्य/असंख्यात प्रमाण स्थिति-बंध होते हुए पल्य के असंख्यात बहुभाग का अपसरण करता हुआ जाता है ।

अनेकों अपसरणों के हो जाने पर तब विशुद्धि-विशेष के माहात्म्य से बंध का क्रम बदल जाता है ।

मोह का बंध तीसीय से कम हो जाता है ।

पूर्व क्रम	वीसीय	तीसीय	चालीसीय
बंध	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात
अल्प-बहुत्व	असंख्यात गुणा		असंख्यात गुणा
नवीन क्रम	वीसीय	चालीसीय	तीसीय
बंध	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात
अल्प-बहुत्व	असंख्यात गुणा		असंख्यात गुणा

तेत्तियमेत्ते बंधे, समतीदे वीसियाण हेट्ठादु ।
एक्कसराहे मोहो, असंखगुणहीणयं होदि ॥424॥

- अन्वयार्थ: (तेत्तियमेत्ते बंधे समतीदे) उतने मात्र (संख्यात हजार) स्थिति-बंध व्यतीत होने पर (एक्कसराहे) एक समय में (वीसियाणं हेट्ठादु) वीसिय कर्मों के नीचे (मोहो) मोहनीय कर्म का स्थिति-बंध (असंखगुणहीणयं) असंख्यात गुणा हीन (होदि) होता है ॥424॥

इसके बाद हजारों अपसरण होने पर चालीसीय का बंध और भी कम होकर वीसीय से भी कम हो जाता है ।

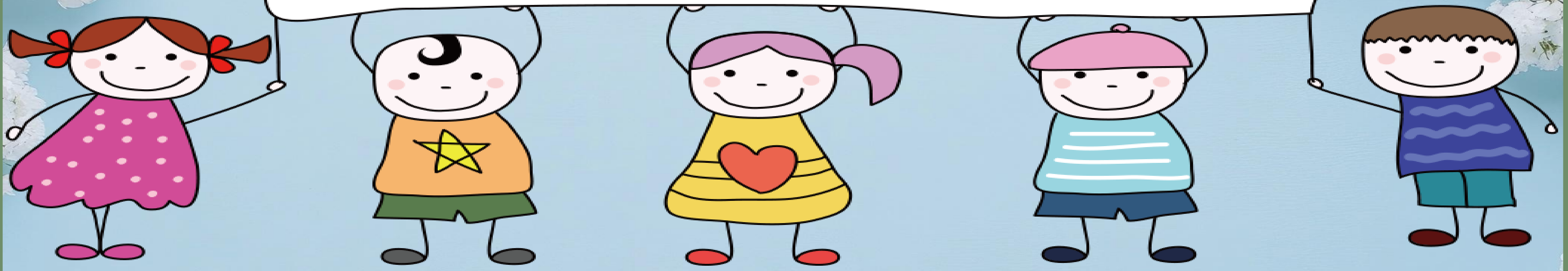

पूर्व क्रम	वीसीय	तीसीय	चालीसीय
नवीन क्रम	चालीसीय	वीसीय	तीसीय

तेत्तियमेत्ते बंधे, समतीदे वेयणीयहेट्ठादु ।
तीसियघादितियाओ, असंखगुणहीणया होंति ॥425॥

- अन्वयार्थ: (तेत्तियमेत्ते बंधे समतीदे) उतने मात्र (संख्यात हजार) स्थिति-बंध जाने पर (तीसियघादितियाओ) ज्ञानावरणादि तीन घातिकर्म (वेयणीय हेट्ठादु) वेदनीय कर्म के नीचे (असंखगुणहीणया) असंख्यातगुणे हीन (होंति) होते हैं ॥425॥

इसके पश्चात् अनेकों बंधापसरण होने पर तीसीय में घातिया कर्मों का बंध; वेदनीय के बंध से असंख्यात गुणाहीन हो जाता है।

अभी तक तीसीय में ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय और साता वेदनीय – इन सभी का सदृश बंध हो रहा था ।

परंतु अब घातिया कर्म का बंध साता वेदनीय के बंध से असंख्यात गुणाहीन हो गया ।

पूर्व क्रम	चालीसीय	वीसीय	तीसीय	
नवीन क्रम	चालीसीय	वीसीय	3 घाति	वेदनीय

असंख्यात गुणा　असंख्यात गुणा　असंख्यात गुणा

www.JainKosh.org

तेत्तियमेत्ते बंधे, समतीदे वीसियाण हेट्ठादु ।
तीसियघादितियाओ, असंखगुणहीणया होंति ॥426॥

- अन्वयार्थ: (तेत्तियमेत्ते बंधे समतीदे) उतने मात्र (संख्यात हजार) स्थिति-बंध व्यतीत होने पर (तीसियघादितियाओ) तीसिय के तीन घातिकर्म (वीसियाण हेट्ठादु) वीसिय के नीचे (असंखगुणहीणया) असंख्यातगुणे हीन (होंति) होते हैं ॥426॥

इसके पश्चात् हजारों बंधापसरण होने पर तीसीय का बंध वीसीय से भी हीन हो जाता है ।

पूर्व क्रम	चालीसीय	वीसीय	तीसीय-घाति	वेदनीय
नवीन क्रम	चालीसीय	तीसीय-घाति	वीसीय	वेदनीय
		असंख्यात गुणा	असंख्यात गुणा	$\frac{3}{2}$ गुणा

यहाँ सभी कर्मों का बंध $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$ है, तथापि पूर्वोक्त अनुसार अल्प-बहुत्व है ।

इन सभी क्रम के बदलने में यहाँ पायी जाने वाली विशुद्धि-विशेष कारण है ।

तक्काले वेदणीयं, णामागोदादु साहियं होदि ।
इदि मोहतीसवीसियवेदणीयाणं कमो बंधे ॥427॥

- अन्वयार्थ: (तक्काले) उस काल में (णामागोदादु) नाम और गोत्र कर्म की अपेक्षा (वेदणीयं) वेदनीय कर्म (साहियं) साधिक (होदि) होता है।
- (इदि) इस प्रकार (बंधे) बंध में (मोहतीसवीसियवेदणीयाणं) मोहनीय, तीसिय, वीसिय और वेदनीय – ऐसा (कमो) क्रम हुआ ॥427॥

क्रमकरण

इस प्रकार मोहनीय, तीसीय, वीसीय, साता वेदनीय का क्रम होने के बाद भी अनेकों बंधापसरण प्रवृत्त होते हैं, तब भी बंध का यही क्रम चलता है ।

यहाँ भी बंध पल्य/असंख्यात प्रमाण ही होता है । अभी संख्यात हजार वर्ष प्रमाण बंध नहीं हुआ है । वह बंध अंतरकरण के पश्चात् ही होता है ।

इस प्रकार विशुद्धि-विशेष होने से क्रमकरण हुआ ।

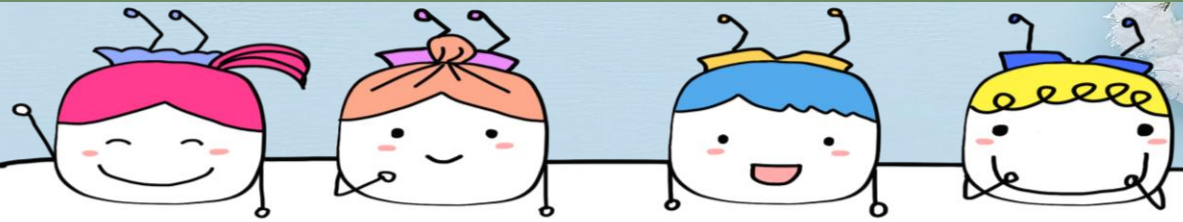

क्रमकरण - उपसंहार

क्रम	कर्मों के नाम			
पूर्व क्रम	वीसीय	तीसीय	चालीसीय	
1	वीसीय	चालीसीय	तीसीय	
2	चालीसीय	वीसीय	तीसीय	
3	चालीसीय	वीसीय	3 घातिया	वेदनीय
4	चालीसीय	3 घातिया	वीसीय	वेदनीय

बंधे मोहादिकमे, संजादे तेत्तियेहिं बंधेहिं ।
ठिदिसंतमसण्णिसमं, मोहादिकमं तहा संते ॥428॥

- अन्वयार्थ: (बन्धे) बन्ध में (मोहादिकमे संजादे) मोहादिकों का क्रम होने पर (तेत्तियेहिं बंधेहिं) उतने ही (संख्यात हजार) स्थितिबंधों के द्वारा (तहा) उसी प्रकार (संते) सत्त्व में (असण्णिसमं) असंज्ञी पंचेन्द्रिय के समान (मोहादिकमं ठिदिसंतं) मोहादि के स्थिति-सत्त्व का क्रम होता है ॥428॥

स्थिति-सत्त्व का क्रमकरण

जिस प्रकार स्थितिबंधापसरण पूर्वक क्रमकरण किया, अब वैसे ही स्थिति-सत्त्व के घातपूर्वक स्थिति-सत्त्व का क्रमकरण भी किया जाता है ।

पृथक्त्व हजार सागर स्थिति-सत्त्व से सत्त्व घटता-घटता असंज्ञी पंचेन्द्रिय आदि के सत्त्व जितना होता जाता है ।

स्थितिघात होने से क्रमशः घटता हुआ कर्मों का सत्त्व

अनिवृत्तिकरण का संख्यात बहुभाग बीतने पर क्रमशः संख्यात हज़ार स्थितिखण्ड होने से कर्मों का सत्त्व इतना होता है –

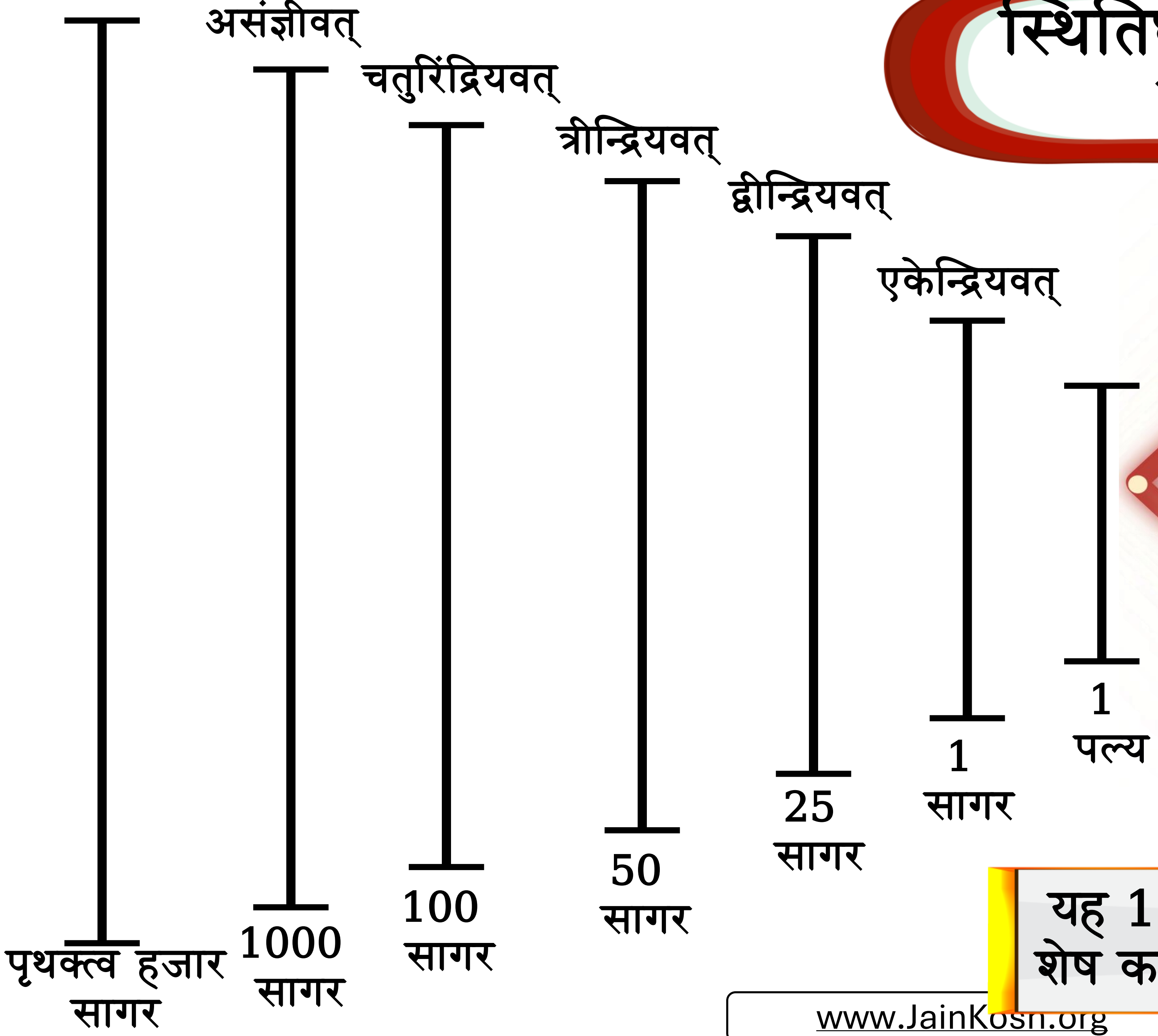

यह 1 पल्य प्रमाण सत्त्व नाम-गोत्र का होता है, शेष कर्मों अपने अनुपात अनुसार सत्त्व जानना ।

www.JainKosh.org

पल्य प्रमाण स्थिति-सत्त्व होने के पश्चात् और स्थिति-सत्त्वापसरण होते हैं, जिससे कर्मों का स्थिति-सत्त्व क्रमशः इस प्रकार होता है

वीसीय	तीसीय	चालीसीय
पल्य	पल्य × $\frac{3}{2}$	पल्य × 2
पल्य/संख्यात	पल्य	पल्य × $\frac{4}{3}$
पल्य/संख्यात	पल्य/संख्यात	पल्य
पल्य/असंख्यात	पल्य/संख्यात	पल्य/संख्यात
पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	पल्य/संख्यात
पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात

www.JainKosh.org

सत्त्व-क्रम करण

इस प्रकार सातों ही कर्मों का पल्य/असंख्यात प्रमाण स्थिति-सत्त्व होते हुए पल्य के असंख्यात बहुभाग का अपसरण करता हुआ जाता है ।

अनेकों अपसरणों के हो जाने पर तब विशुद्धि-विशेष के माहात्म्य से सत्त्व का क्रम बदल जाता है ।

मोह का सत्त्व तीसीय से कम हो जाता है ।

पूर्व क्रम	वीसीय	तीसीय	चालीसीय
सत्त्व	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात
अल्प-बहुत्व	असंख्यात गुणा	असंख्यात गुणा	
नवीन क्रम	**वीसीय**	**चालीसीय**	**तीसीय**
सत्त्व	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात	पल्य/असंख्यात
अल्प-बहुत्व		असंख्यात गुणा	असंख्यात गुणा

सत्त्व-क्रमकरण - उपसंहार

जैसे बंध में क्रमकरण का क्रम कहा है, उसी प्रकार यहाँ आगे सत्त्व में भी क्रमकरण होता है ।

प्रत्येक संख्यात हजार स्थिति-खंड होने के पश्चात् कर्मों के सत्त्व का क्रम बदल जाता है ।

यह क्रम क्रमशः इस प्रकार होता है:

क्रम	कर्मों के नाम			
पूर्व क्रम	वीसीय	तीसीय	चालीसीय	
1	वीसीय	चालीसीय	तीसीय	
2	चालीसीय	वीसीय	तीसीय	
3	चालीसीय	वीसीय	3 घातिया	वेदनीय
4	चालीसीय	3 घातिया	वीसीय	वेदनीय

क्रमकरण के अंत में बंध, सत्त्व का अल्प-बहुत्व

इस प्रकार पल्य के असंख्यात भाग प्रमाण स्थिति-बंध हो रहा है,

पल्य/असंख्यात प्रमाण ही स्थिति-सत्त्व है ।

पर बंध से सत्त्व असंख्यात गुणा है ।

www.JainKosh.org

तीदे बंधसहस्से, पल्लासंखेज्जयं तु ठिदिबंधे ।
तत्थ असंखेज्जाणं, उदीरणा समयबद्धाणं ॥429॥

- अन्वयार्थ: (ठिदिबंधे) स्थिति-बंध में (पल्लासंखेज्जयं) पल्योपम के असंख्यातवें भाग मात्र (बंधसहस्से तीदे) संख्यात हजार स्थिति-बंध व्यतीत होने पर (तत्थ) वहाँ (असंखेज्जाणं समयबद्धाणं) असंख्यात समयप्रबद्धों की (उदीरणा) उदीरणा होती है ॥429॥

असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा

क्रमकरण होने के संख्यात हजार बंधापसरणों के पश्चात् असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा प्रारंभ होती है ।

जो गुणश्रेणी का द्रव्य एक असंख्यात लोकमात्र भाग प्रमाण उदयावली में दिया जाता था, उसके स्थान पर पल्य/असंख्यात भाग प्रमाण द्रव्य उदयावली में दिया जाता है । यह असंख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्य होता है ।

असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा के पहले भागहार

= असंख्यात लोक

असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा से भागहार

$$= \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$$

sh.org

ठिदिबंधसहस्सगदे, अट्ठकसायाण होदि संकमगो ।
ठिदिखंडपुधत्तेण य, तट्ठिदिसंतं तु आवलियविद्धं ॥430॥

- अन्वयार्थ: उसके पश्चात् (ठिदिबंधसहस्सगदे) संख्यात हजार स्थिति-बंध जाने पर (अट्ठकसायाण) मध्यवर्ती आठ कषायों का (संकमगो) संक्रामक (होदि) होता है।
- (य) और (ठिदिखंडपुधत्तेण) स्थितिकांडक पृथक्त्व के द्वारा (तट्ठिदिसंतं) उन आठ कषायों का स्थिति-सत्त्व (आवलियविद्धं) एक आवलि प्रमाण शेष रहता है ॥430॥

आठ कषायों की क्षपणा

इसके पश्चात् हजारों स्थिति-बंध बीतने पर मध्यवर्ती 8 कषायों का युगपत् संक्रामक होता है ।

परप्रकृतिरूप संक्रमण के द्वारा क्षपणा प्रारंभ करना – यही यहाँ संक्रमण का अर्थ ग्रहण करना चाहिये ।

मोहनीय की शेष 21 प्रकृतियों में से 8 कषायें – अप्रत्याख्यान-4 और प्रत्याख्यान-4 ये सबसे अधिक अप्रशस्त हैं । इसलिए इनका क्षय पहले होता है ।

आठ कषायों की क्षपणा

यहाँ संक्रमणकांडक पृथक्त्व प्रमाण है ।

अभी भी इन 8 की गुणश्रेणि निर्जरा चल रही है । उसका द्रव्य अपनी-अपनी स्व-स्थिति में ही दिया जाता है ।

इनके हजारों कांडक हो जाने पर अंतिम कांडकघात के द्वारा इनका आवली प्रमाण सत्त्व छोड़कर शेष सर्व सत्त्व पर-प्रकृति में संक्रमित होकर नष्ट होता है ।

अंतिम कांडक का आयाम पल्य/असं. होता है ।

8 कषायों का क्षय होने पर मोहनीय की 13 प्रकृतियों का सत्त्व रहता है ।

8 कषायों का अंतिम कांडक

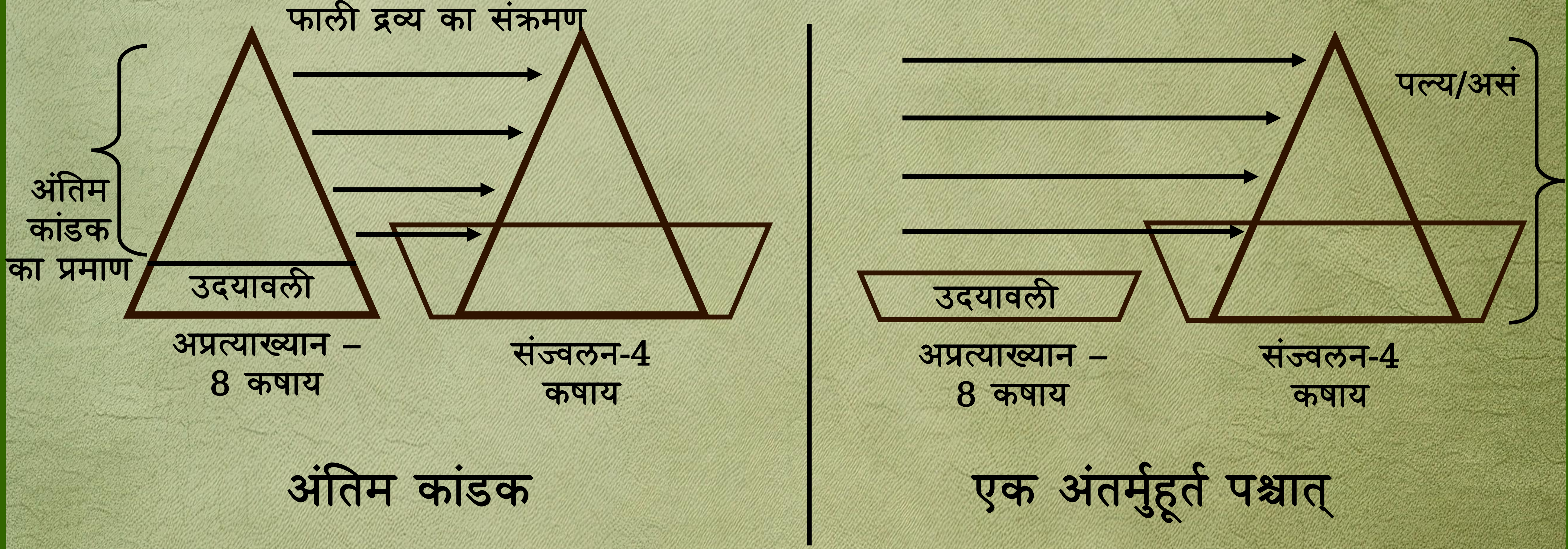

- अपूर्वकरण के प्रथम समय से चरमकांडक की द्विचरम फाली तक गुणसंक्रमण होता है। अंतिम समय में सर्व संक्रमण होता है।

प्रश्न- एक आवली प्रमाण सत्त्व क्यों शेष रखा है ? उसका भी कांडकघात द्वारा नाश कर देते ?

उत्तर – नहीं, उदयावली में प्रविष्ट हुए कर्म का कांडकघात संभव नहीं है । ये आवली प्रमाण निषेक; स्तिबुक संक्रमण के द्वारा एक-एक करके उदीयमान कर्म में संक्रमित होकर नष्ट होंगे ।

इनका जघन्य स्थिति-सत्त्व दो समय प्रमाण होता है ।

एक आवली काल के पश्चात् 8 कषायों का आवली प्रमाण सत्त्व भी नष्ट हो जाता है । तब मोहनीय की 13 प्रकृतियां ही सत्ता में शेष रहती है ।

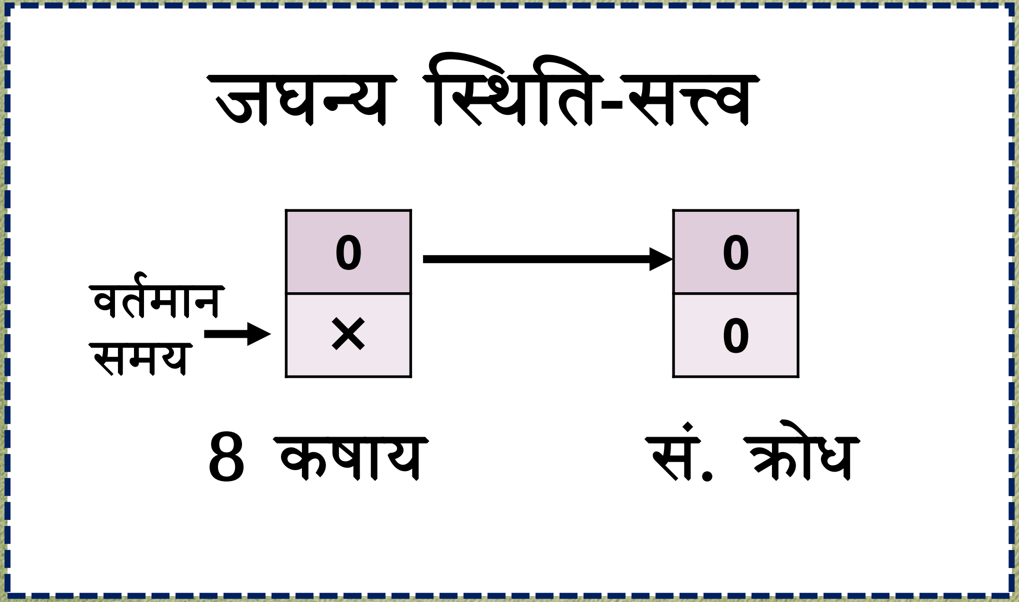

ठिदिबंधपुधत्तगदे, सोलसपयडीण होदि संकमगो ।
ठिदिखंडपुधत्तेण य, तट्ठिदिसंतं तु आवलिपविट्ठं ॥431॥

- अन्वयार्थ: उसके पश्चात् (ठिदिबंधपुधत्तगदे) संख्यात हजार स्थिति-बंध व्यतीत हो जाने पर (सोलसपयडीण) सोलह प्रकृतियों का (संकमगो) संक्रामक (होदि) हाता है।
- (ठिदिखंडपुधत्तेण य) संख्यात हजार स्थितिकाण्डकों के द्वारा (तट्ठिदिसंतं तु) उनका स्थिति-सत्त्व (आवलिपविट्ठं) आवलि प्रविष्ट रहता है अर्थात् उच्छिष्टावली प्रमाण रहता है ॥431॥

16 कर्मों की क्षपणा

इसके पश्चात् हजारों स्थिति-बंध बीतने पर नामकर्म संबंधी 13 और दर्शनावरण संबंधी 3 कर्मों का संक्रामक होता है अर्थात् उनके क्षय की प्रक्रिया प्रारंभ करता है ।

संक्रामक होने से संख्यात हजार कांडकों के द्वारा इन 16 कर्मों का संक्रमण अन्य बध्यमान कर्मों में करता है ।

अंतिम स्थितिकांडक में एक आवली छोड़कर शेष रहे हुए सारे स्थिति-सत्त्व का घात करता है ।

कांडक की अंतिम फाली का पतन होने पर एक आवली प्रमाण सत्त्व को छोड़कर संपूर्ण सत्त्व सजातीय अन्य प्रकृतियों में संक्रांत हो जाता है ।

एक आवली प्रमाण निषेकों का स्तिबुक संक्रमण होकर नाश हो जाता है ।

इस प्रकार एक आवली बीतने पर 16 कर्मों का क्षय हो जाता है । तब दर्शनावरण का प्रकृति-सत्त्व 6 का एवं नामकर्म का प्रकृति-सत्त्व यथायोग्य 80, 79, 78 या 77 का होता है ।

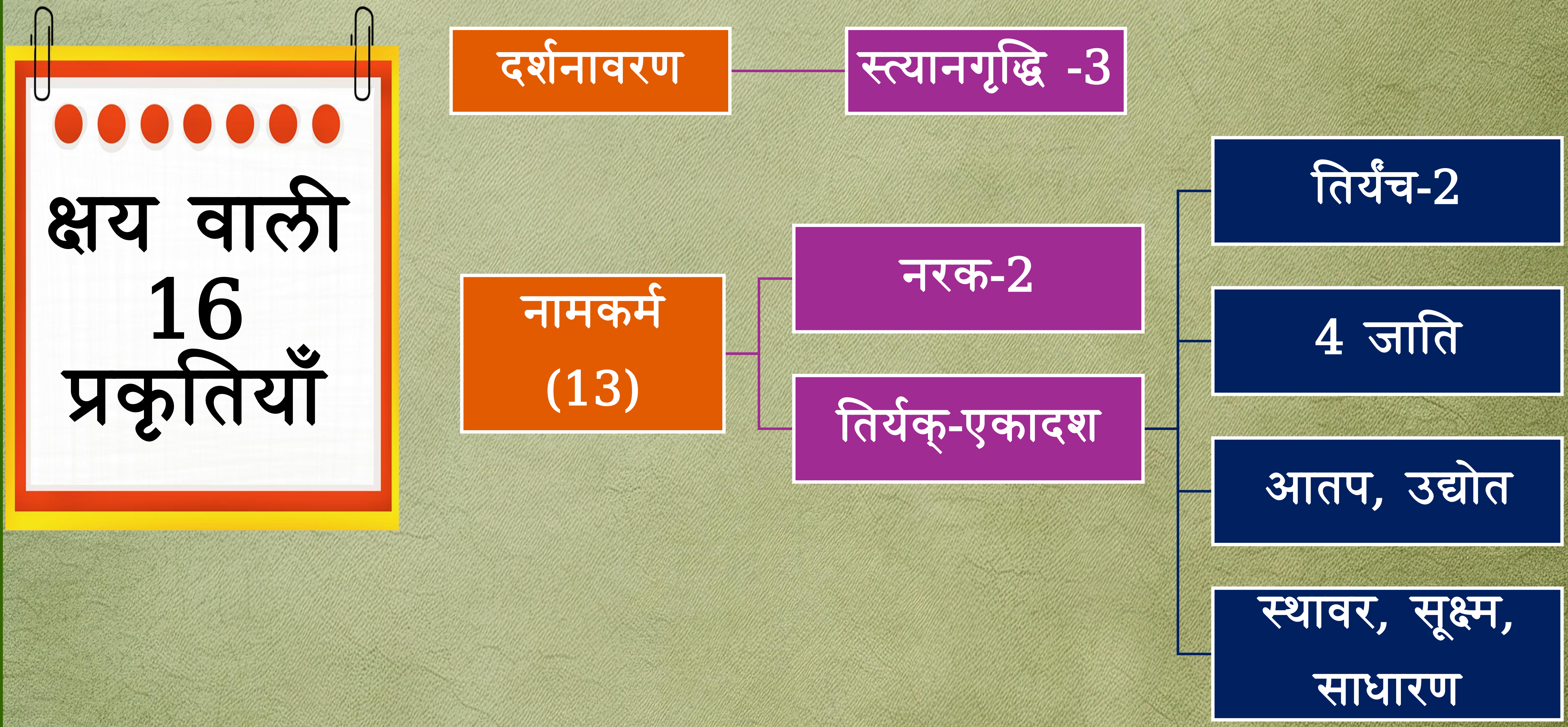

अभी ज्ञानावरण आदि अन्य कर्मों का क्षय नहीं हुआ है ।

ठिदिबंधसहस्सगदे, मणदाणा तेत्तिये वि ओहिदुगं ।
लाभं व पुणो वि सुदं, अचक्खु भोगं पुणो चक्खु ॥432॥
पुणरवि मदि-परिभोगं, पुणरवि विरियं कमेण अणुभागो ।
बंधेण देसघादी, पल्लासंखं तु ठिदिबंधो ॥433॥

- अन्वयार्थ - (ठिदिबंधसहस्सगदे) संख्यात हजार स्थिति-बंध व्यतीत होने पर (मणदाणा) मनःपर्यय ज्ञानावरण और दानान्तराय का (अणुभागो बंधेण देसघादि) अनुभाग-बंध देशघाति होता है।
- (तेत्तिये वि) उतने ही अर्थात् संख्यात हजार स्थिति-बंध होनेपर (ओहिदुगं) अवधिद्विक अर्थात् अवधिज्ञानावरण, अवधिदर्शनावरण और (लाभं व) लाभान्तराय
- (पुणो वि) उसके पश्चात् (सुदं अचक्खु भोगं) श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शन और भोगांतराय
- (पुणो) पुनः (चक्खु) चक्षुदर्शनावरण
- (पुणरवि मदि परिभोगं) पुनः मतिज्ञानावरण व परिभोगान्तराय
- (पुणरवि) पुनः (विरियं) वीर्यान्तराय का (कमेण) क्रम से (बंधेण देसघादी अणुभागो) बंध की अपेक्षा से अनुभाग देशघाति होता है अर्थात् देशघाति स्पर्धकों का ही बंध होता है।
- (तु) परन्तु (ठिदिबंधो) स्थिति-बंध (पल्लासंखं) पल्य का असंख्यातवाँ भाग प्रमाण ही होता है ॥432-433॥

देशघातिकरण

परिणामों की विशुद्धि के निमित्त से

देशघाती प्रकृतियों का

मात्र देशघाती स्पर्धकरूप द्विस्थानीय बंध करना

देशघातिकरण कहलाता है ।

जो देशघाती प्रकृतियाँ हैं, उनका द्विस्थानीय बंध हो रहा है । इसमें देशघाती और सर्वघाती – दोनों प्रकार के स्पर्धकों का बंध चल रहा है ।

असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा के पश्चात् हजारों बंधापसरण हो जाने पर इनका देशघाति मात्र बंध प्रारंभ होता है । इसे ही देशघातिकरण कहते हैं ।

www.JainKosh.org

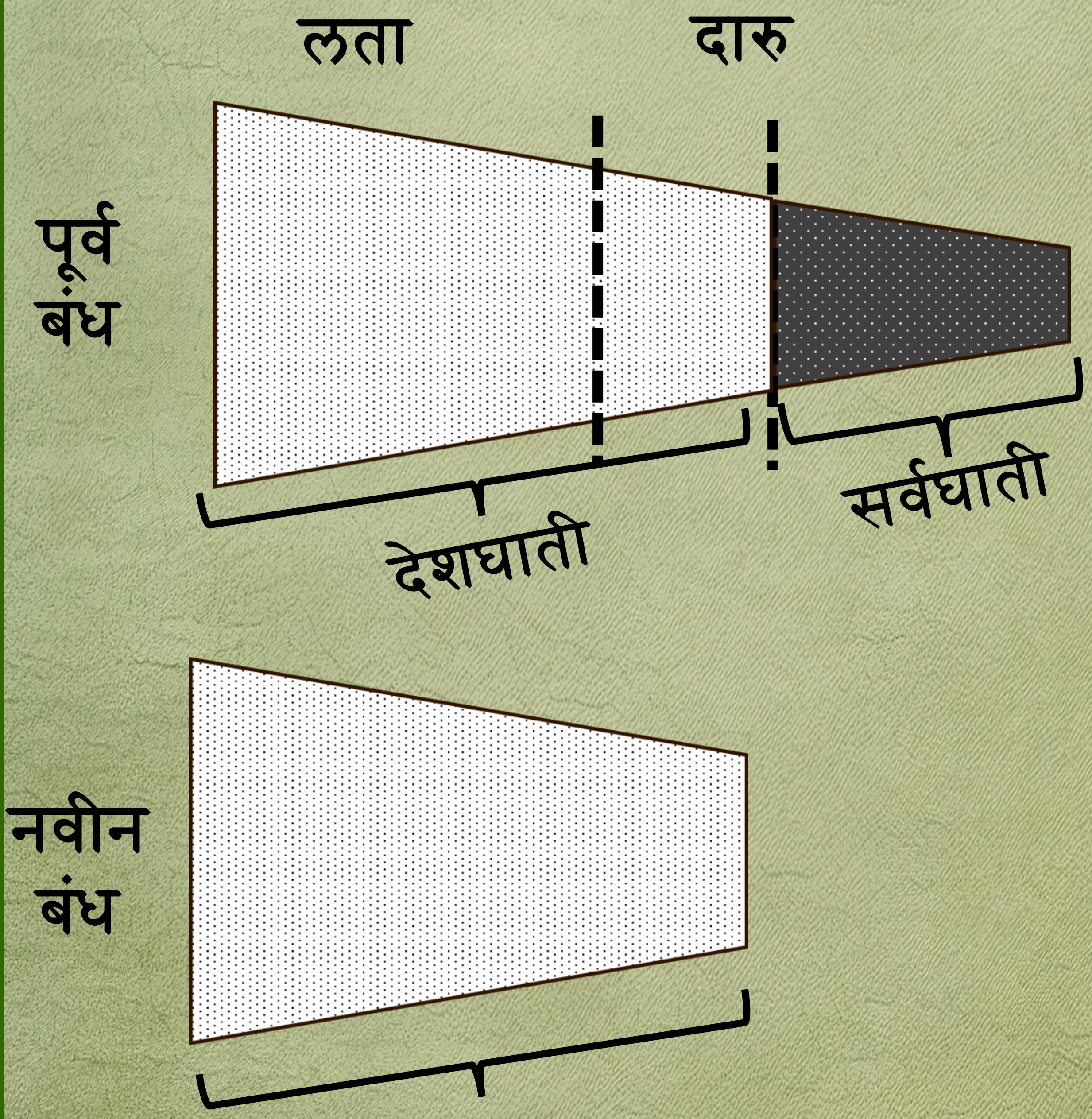

ध्यान रहे कि अभी भी द्विस्थानीय बंध हो रहा है; तदपि वह देशघाती स्पर्धकरूप ही है । दारु का अनंतवां भाग स्पर्धक देशघाती होते हैं । उसी अनंतवें भाग के भीतर इनका बंध है ।

यहाँ बंध ही देशघाती हुआ है, उदय नहीं । उदय तो अभी भी यथायोग्य प्रकृतियों का देशघाती या देशघाती-सर्वघाती द्विस्थानीय उदय में आता है ।

घातिया कर्म की ये प्रकृतियाँ देशघाती हैं –

मतिज्ञानावरण आदि 4	चक्षु, अचक्षु, अवधिदर्शनावरण 3
संज्वलन 4	नोकषाय 9
अंतराय 5	सम्यक्त्व 1

यहाँ अनिवृत्तिकरण में पुरुषवेद को छोड़कर शेष 8 नोकषाय तो बंध-योग्य ही नहीं हैं ।

सम्यक्त्व प्रकृति सर्वत्र ही बंध योग्य नहीं है ।

अतः जो शेष प्रकृतियाँ बंधती हैं, उनका देशघाती करण कहते हैं ।

प्रत्येक संख्यात हजार बंधापसरण होने पर क्रमशः इनका देशघातिकरण होता है –

1) मनःपर्यय ज्ञानावरण, दानांतराय

2) अवधिदर्शनावरण, अवधिज्ञानावरण, लाभांतराय

3) श्रुतज्ञानावरण, अचक्षुदर्शनावरण, भोगांतराय

4) चक्षुदर्शनावरण

5) मतिज्ञानावरण, उपभोगांतराय

6) वीर्यांतराय

जो कम शक्ति वाला है,
उसका देशघातिकरण पहले हुआ है ।

जो अधिक शक्ति वाला है,
उसका देशघातिकरण बाद में हुआ है ।

प्रश्न- संज्वलन एवं नोकषाय भी बध्यमान देशघाति प्रकृति है । उनका देशघातिकरण क्यों नहीं कहा है ?

उत्तर- उनका संयमासंयम गुणस्थान के प्रथम समय से ही देशघातिरूप बंध होता है । अतः उनका कथन यहाँ करने की आवश्यकता नहीं है ।

इस देशघातिकरण के पूर्व संसार अवस्था में सर्वघाती का बंध ही होता है । यहाँ से ही; मात्र देशघातिरूप बंध प्रारंभ हुआ है । इस प्रकार देशघातिकरण होने पर अंत में सभी कर्मों का स्थिति-बंध यथायोग्य पल्य/असंख्यात प्रमाण होता है ।

ठिदिखंडसहस्सगदे, चदुसंजलणाण णोकसायाणं ।
एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले अंतरं कुणदि ॥434॥

- अन्वयार्थ: देशघातिकरण के पश्चात् (ठिदिखंडसहस्सगदे) संख्यात हजार स्थितिकाण्डक व्यतीत हो जाने पर (एयट्ठिदिखंडुक्कीरणकाले) एक स्थितिकांडकोत्कीरणकाल में (चदुसंजलणाण णोकसायाणं) चार संज्वलन और नौ नोकषायों का (अंतरं कुणदि) अंतर करता है ॥434॥

अंतरकरण

देशघातिकरण के पश्चात्

संख्यात हजार बंधापसरण के बीतने पर

चारित्र मोह की 13 प्रकृतियों का

अंतरकरण करता है ।

शेष का पहले ही नाश हुआ है ।

www.JainKosh.org

जितना एक स्थितिकांडक में समय लगता है, उतने काल में ही अंतरकरण भी पूर्ण हो जाता है ।

अर्थात् अंतरायाम की रचना एक अंतर्मुहूर्त काल में हो जाती है ।

संजलणाणं एक्कं, वेदाणेक्कं उदेदि तद्दोण्हं ।
सेसाणं पढमट्ठिदि, ठवेदि अंतोमुहुत्तमावलियं ॥435॥

- अन्वयार्थ: (संजलणाणं एक्कं) चार संज्वलन कषायों में से एक कषाय का और (वेदाणेक्कं) तीन वेदों में से एक वेद का (उदेदि) उदय आता है।
- (तद्दोण्हं) उन उदयरूप दोनों प्रकृतियों की (पढमट्ठिदि अंतोमुहुत्तं ठवेदि) प्रथम स्थिति अंतर्मुहूर्तमात्र स्थापित करता है और
- (सेसाणं) शेष अनुदयरूप प्रकृतियों की प्रथम स्थिति (आवलियं ठवेदि) आवलिमात्र स्थापित करता है ॥435॥

प्रथम स्थिति का प्रमाण

उदय वाली 2 प्रकृति

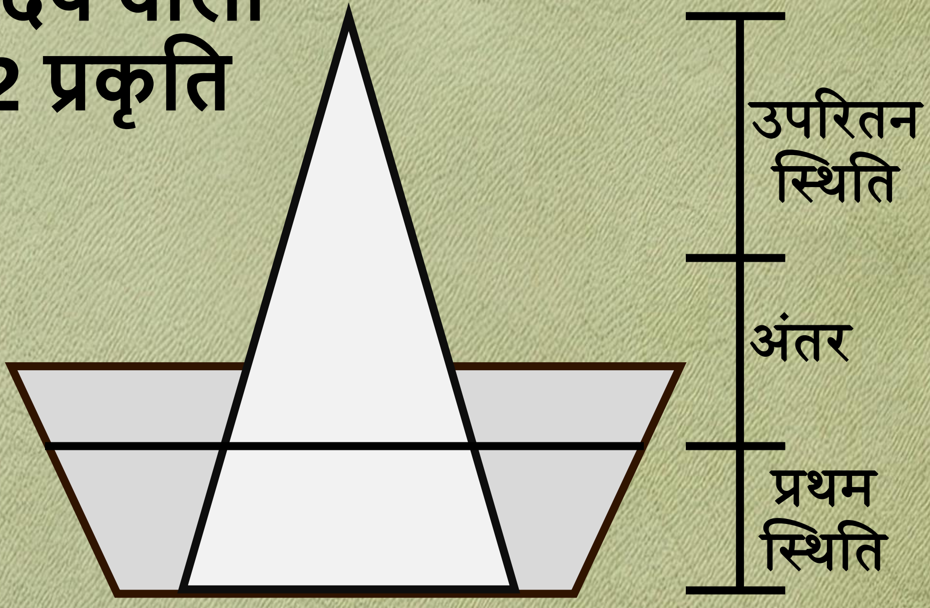

अनुदय 11 प्रकृति

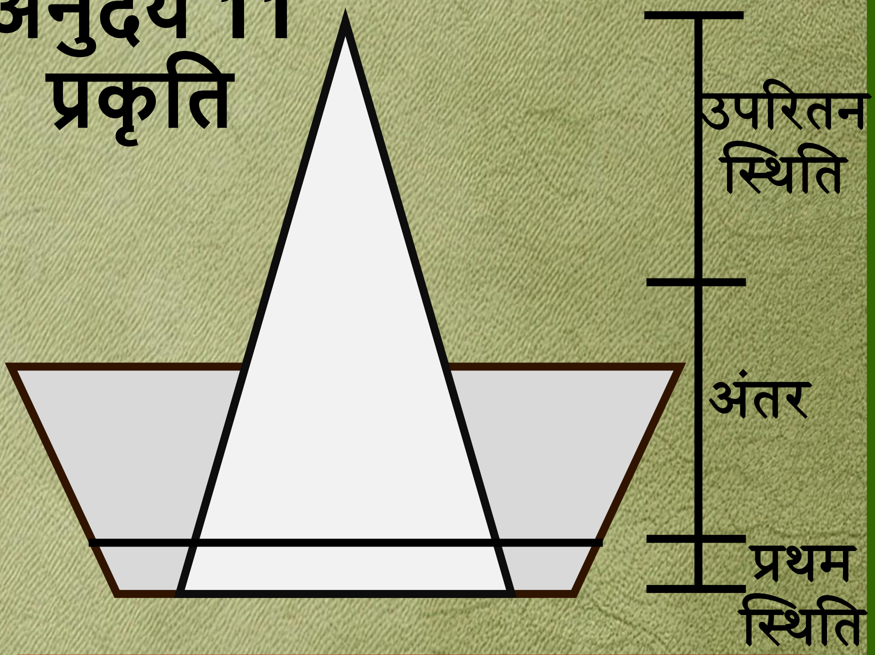

यहाँ तीन वेदों में से एक वेद का उदय चल रहा है तथा संज्वलन की चार कषायों में से एक कषाय का उदय चल रहा है ।

यह क्षपक जीव उदय वाली 2 प्रकृति – कषाय और वेद – की प्रथम स्थिति अंतर्मुहूर्त प्रमाण स्थापित करता है ।

शेष 11 कर्मों का उदय नहीं है ।

शेष 11 कर्मों की प्रथम स्थिति एक आवली मात्र स्थापित करता है।

उक्कीरिदं तु दव्वं, सत्ते पढमट्ठिदिम्हि संछुहदि ।
बंधे वि य आबाधमदित्थिय उक्कट्टदे णियमा ॥436॥

- अन्वयार्थ: (उक्कीरिदं तु दव्वं) अंतरायाम के उत्कीर्ण किए द्रव्य को (सत्ते पढमट्ठिदिम्हि) सत्ता की प्रथम स्थिति में (संछुहदि) निक्षिप्त करता है।
- (य) और (बंधे वि) बंध में भी (आबाधमदित्थिय) आबाधा का उल्लंघन करके (णियमा) नियम से (उक्कट्टदे) उत्कर्षण करके देता है ॥436॥

अंतरायाम के द्रव्य का निक्षेपण

यहाँ मोहनीय की चार प्रकार की प्रकृतियाँ हैं –

केवल बध्यमान

- जिन प्रकृतियों का मात्र बंध है, उदय नहीं है । यथा – 3 संज्वलन तथा यदि स्त्री या नपुंसकवेद से श्रेणी आरोहण किया है तो पुरुषवेद

केवल उदयमान

- जिन प्रकृतियों का मात्र उदय है, बंध नहीं है ।
- स्त्रीवेद, नपुंसकवेद (पुरुषवेद से श्रेणी आरोहण नहीं करने पर)

www.JainKosh.org

उभय

- जिनका बंध और उदय दोनों चल रहा है । यथा – एक संज्वलन कषाय, पुरुषवेद (पुरुषवेद से श्रेणी आरोहण करने पर)

अनुभय

- जिनका बंध और उदय – दोनों ही नहीं है ।
- यथा – 6 नोकषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद

अंतरायाम के द्रव्य के निक्षेपण के नियम

1) अंतरायाम का द्रव्य अंतरायाम की स्थितियों में नहीं दिया जाता है क्योंकि इस द्रव्य का तो अंतर करना है ।

2) बंधरहित प्रकृति की द्वितीय स्थिति में द्रव्य नहीं दिया जा सकता क्योंकि बंध में उत्कर्षण होता है – ऐसा नियम है ।

3) उदयरहित प्रकृति की प्रथम स्थिति में द्रव्य नहीं दिया जा सकता क्योंकि उसकी प्रथम स्थिति एक आवली मात्र है । वह एक आवली उदयावली है तथा उदयरहित होने से उदीरणा संभव नहीं है ।

4) बध्यमान प्रकृति की द्वितीय स्थिति में द्रव्य उत्कर्षित करके दिया जा सकता है ।

5) उदयमान प्रकृति की प्रथम स्थिति में द्रव्य अपकर्षित करके दिया जा सकता है ।

6) उदय वाली प्रकृति की प्रथम स्थिति में अन्य प्रकृति का द्रव्य तब ही दिया जा सकता है जब उसका बंध भी हो रहा हो क्योंकि संक्रमण बध्यमान में ही होता है।

इन चारों प्रकारों का अंतरायाम का द्रव्य उपर्युक्त नियमानुसार इस प्रकार निक्षिप्त किया जायेगा-

1) केवल बध्यमान का द्रव्य

- 1. अपने बंध में तथा बंध-उदय सहित अन्य प्रकृति में उत्कर्षित करके दिया जा सकेगा । यह द्वितीय स्थिति में आबाधा को छोड़कर दिया जायेगा ।
- 2. बध्यमान-उदीयमान वेद तथा 1 संज्वलन की प्रथम स्थिति में भी निक्षिप्त किया जाता है ।

‘केवल बध्यमान’ का अंतरायाम में से उत्कीर्ण द्रव्य देने का विधान

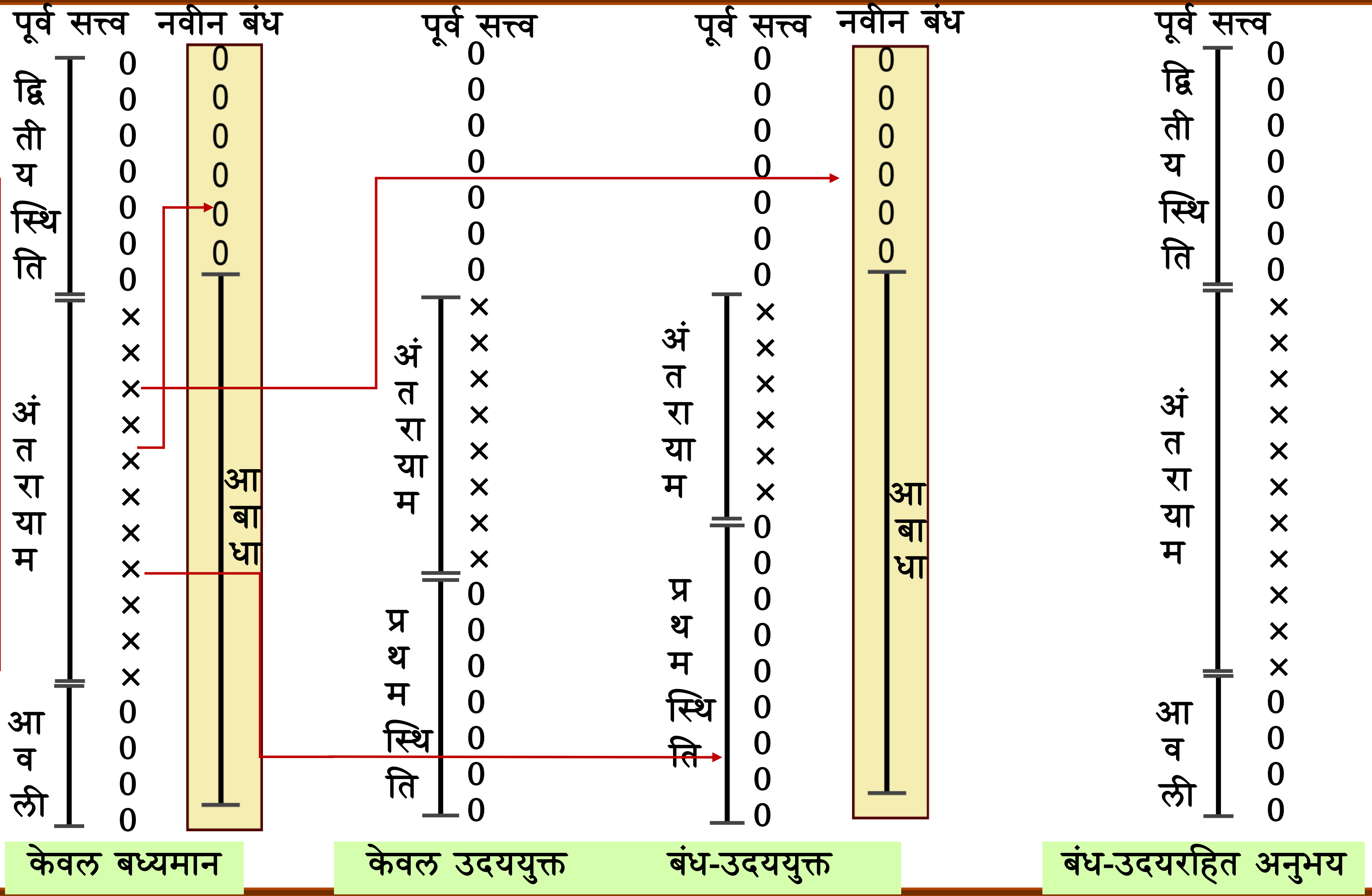

केवल उदयमान का अंतरायाम का द्रव्य

1) अपनी-अपनी प्रथम स्थिति में अपकर्षित करके निक्षिप्त किया जाता है ।

2) बध्यमान पुरुषवेद तथा 4 कषाय की द्वितीय स्थिति में उत्कर्षित करके निक्षिप्त किया जाता है ।

3) उदीयमान कषाय की प्रथम स्थिति में भी अपकर्षित करके संक्रमित किया जाता है ।

‘केवल उदययुक्त’ का अंतरायाम में से उत्कीर्ण द्रव्य देने का विधान

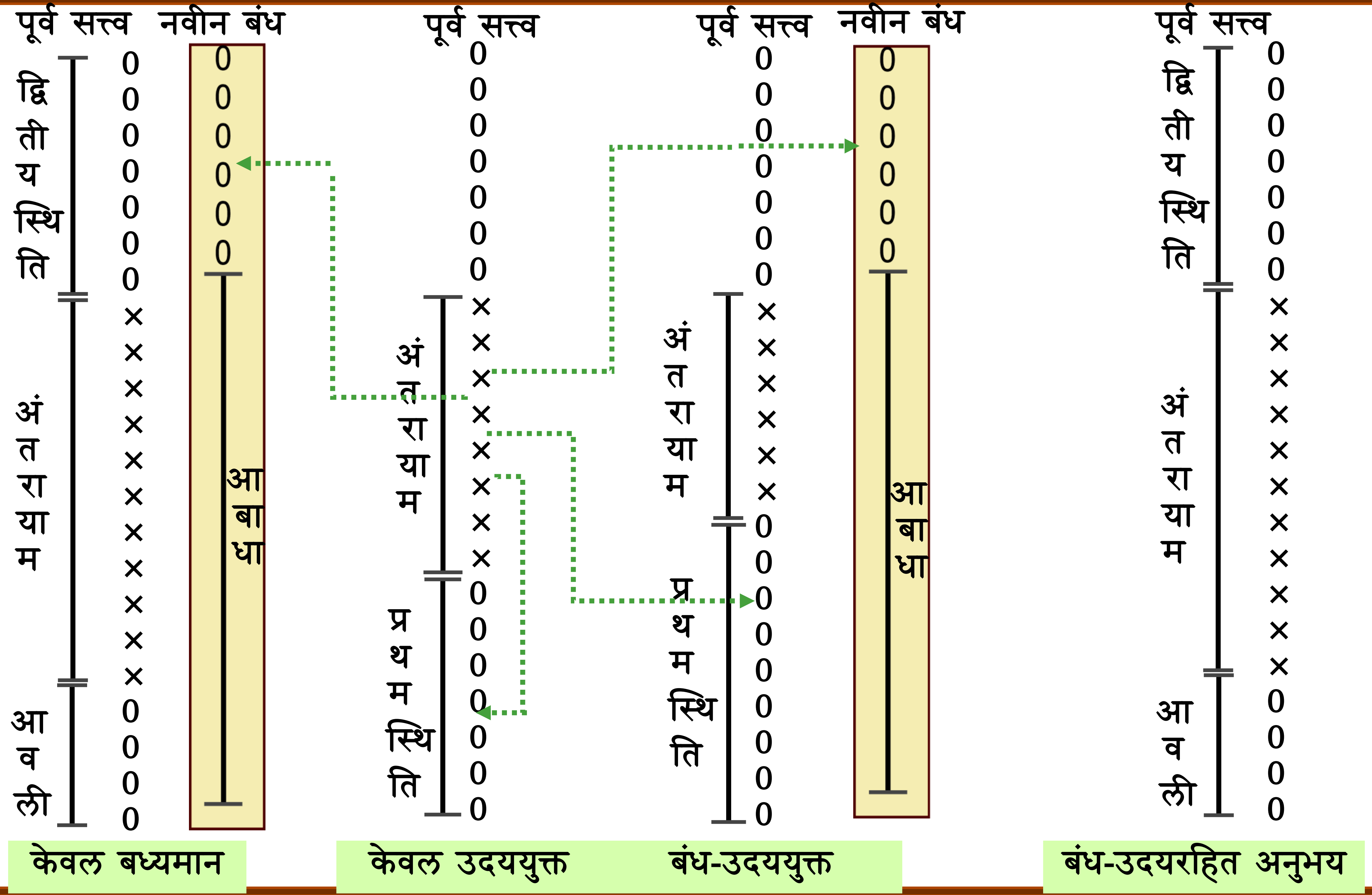

‘उभय’ प्रकृति का अंतरायाम का द्रव्य

1) अपनी-अपनी प्रथम स्थिति में अपकर्षण करके दिया जाता है ।

2) अपनी-अपनी द्वितीय स्थिति में उत्कर्षण करके किया जाता है ।

3) एक ‘उभय’ प्रकृति का द्रव्य अपकर्षण करके अन्य बध्यमान-उदयमान प्रकृति की प्रथम स्थिति में संक्रमित किया जाता है ।

4) एक ‘उभय’ प्रकृति का द्रव्य उत्कर्षण करके अन्य बध्यमान प्रकृति की द्वितीय स्थिति में संक्रमित किया जाता है ।

‘बंध-उदययुक्त’ का अंतरायाम में से उत्कीर्ण द्रव्य देने का विधान

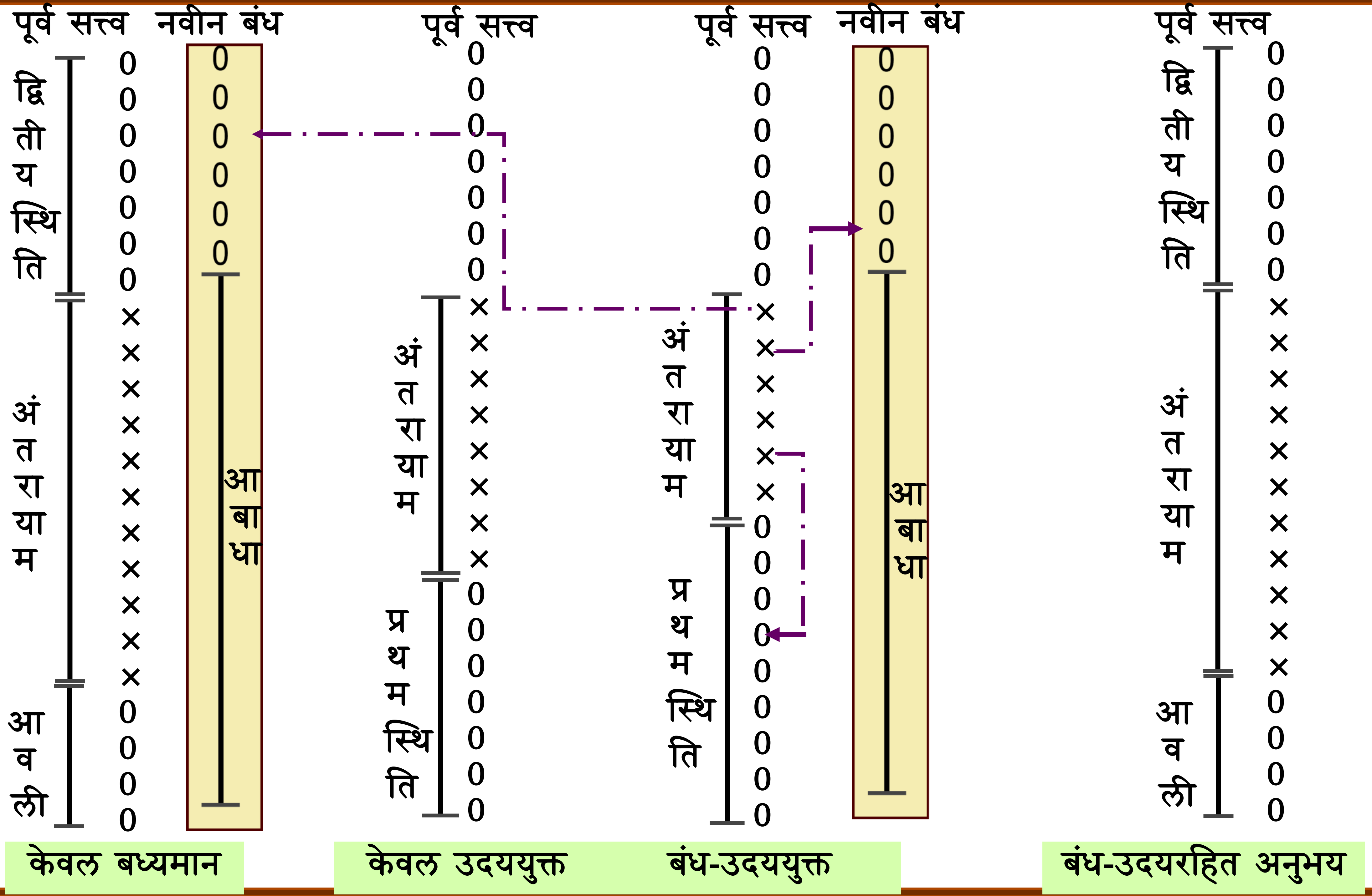

‘अनुभय’ प्रकृति का अंतरायाम का द्रव्य

1) तात्कालिक बध्यमान प्रकृतियों की द्वितीय स्थिति में उत्कर्षण करके संक्रमित किया जाता है ।

2) तात्कालिक बध्यमान-उदयमान प्रकृतियों की प्रथम स्थिति में अपकर्षित करके संक्रमित किया जाता है ।

‘बंध-उदयरहित’ का अंतरायाम में से उत्कीर्ण द्रव्य देने का विधान

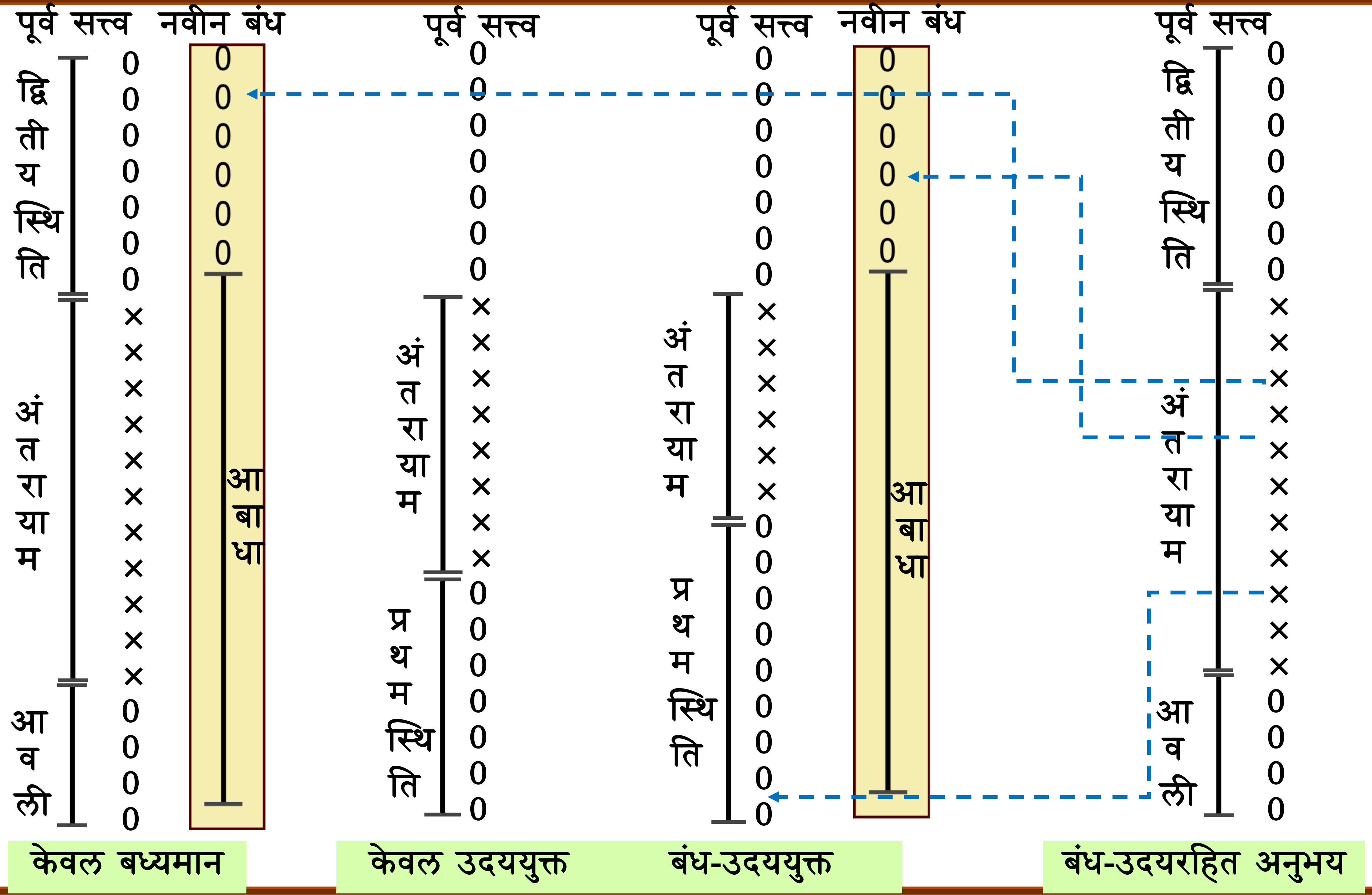

अंतरायाम में से उत्कीर्ण द्रव्य देने का विधान

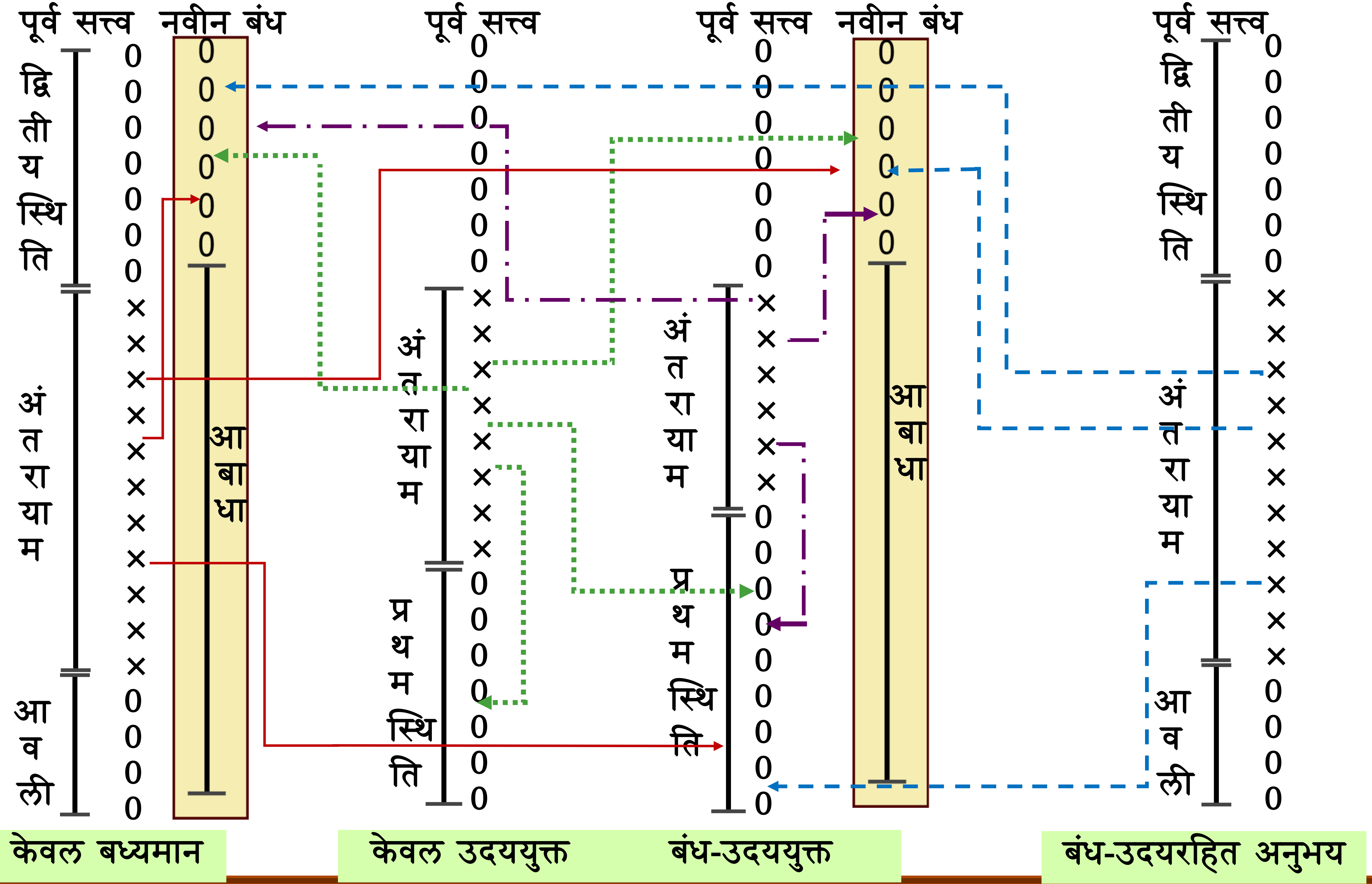

प्रथम स्थिति और अंतरायाम का आयाम

अंतरकरण करने के समय प्रथम स्थिति और अंतरायाम का आयाम अवस्थित हो जाता है ।

एक-एक समय बीतने पर प्रथम स्थिति का एक निषेक उदयावली में प्रवेश करता है । अंतरायाम का एक निषेक प्रथम स्थिति में प्रवेश करता है । द्वितीय स्थिति का एक निषेक अंतरायाम में प्रवेश करता है ।

इस प्रकार अंतरकरण करने के समय द्वितीय स्थिति का प्रमाण ही घटता है, प्रथम स्थिति और अंतरायाम का आयाम अवस्थित रहता है ।

प्रथम स्थिति और अंतरायाम का आयाम

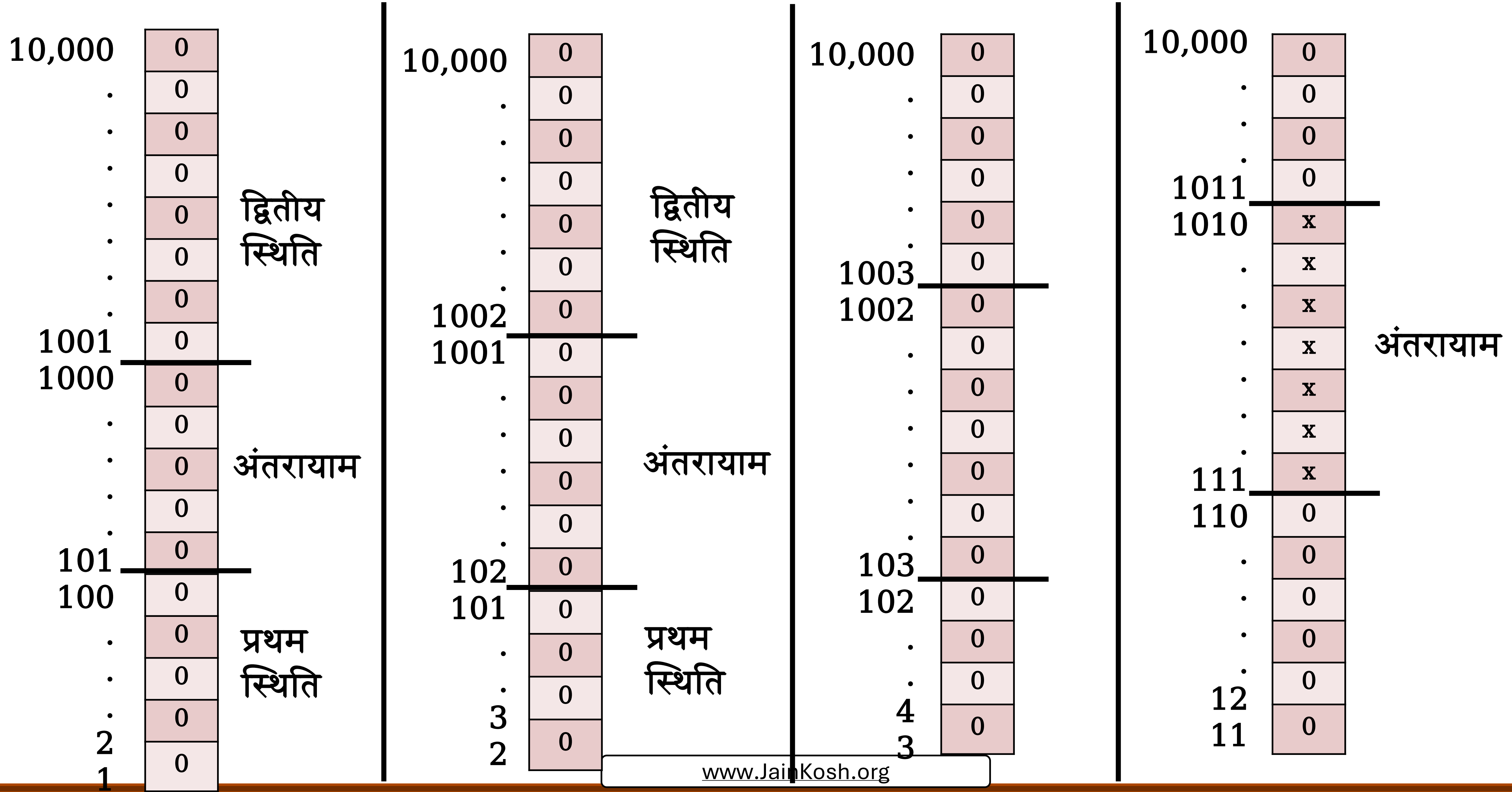

www.JainKosh.org

अंतरकरण पूर्ण होने पर मोहनीय की निषेक-स्थिति

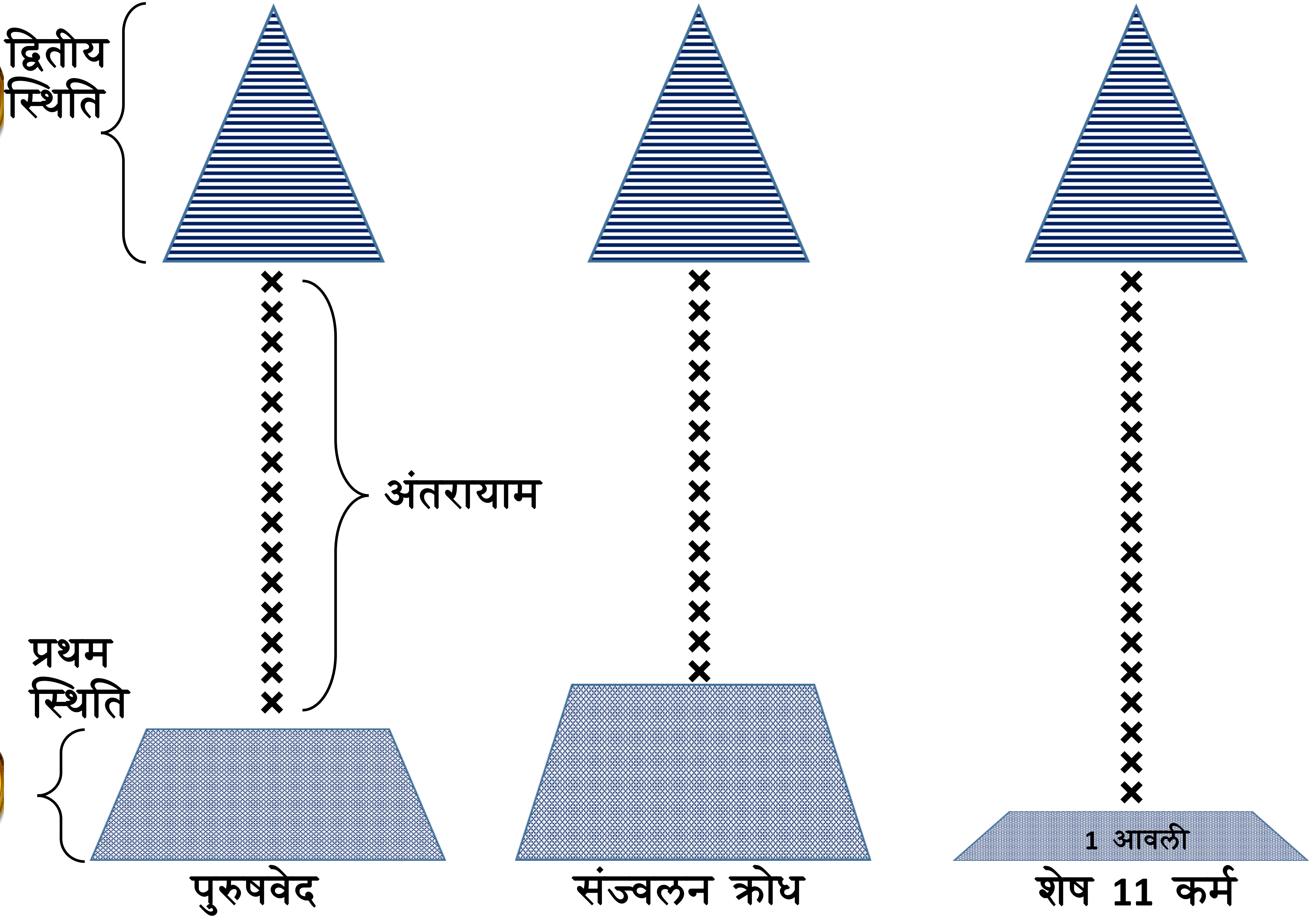

सत्तकरणाणि यंतरकदपढमे ताणि मोहणीयस्स ।
इगिठाणियबंधुदओ, तस्सेव य संखवस्सठिदिबंधो ॥437॥
तस्साणुपुव्विसंकम, लोहस्स असंकमं च संढस्स ।
आजुत्तकरणसंकम, छावलितीदेसुदीरणदा ॥438॥

- अन्वयार्थः (यंतरकदपढमे) अंतरकरण होने पर प्रथम समय में (मोहणीयस्स) मोहनीय के (सत्तकरणाणि) सात करण होते हैं।
- (इगिठाणियबंधुदओ) एक स्थानीय बंध, एक स्थानीय उदय, (संखवस्सठिदिबंधो) मोहनीय कर्म का संख्यात वर्ष स्थिति-बंध, (आणुपुव्विसंकमणं) मोहनीय का आनुपूर्वी संक्रमण, (च) और (लोहस्स असंकमं) संज्वलन लोभ का असंक्रमण (संढस्स आजुत्तकरण-संकम) नपुंसकवेद का आयुक्तकरण संक्रमण (च) और (छावलितीदेसुदीरणदा) छह आवली व्यतीत होने पर मोहनीय की उदीरणा ॥437-438॥

अंतरकरण के पश्चात् 7 विशेष कार्य

अंतरकरण कर लेने के प्रथम समय से 7 विशेष कार्य होते हैं, जो पूर्व में नहीं होते थे-

1) मोहनीय की प्रकृतियों का लता समान एक-स्थानीय बंध होता है । इसके पूर्व द्वि-स्थानीय बंध हो रहा था । यहाँ पर ही विशुद्ध परिणामों के निमित्त से एक-स्थानीय बंध होता है । संसार की अन्य किसी भी दशा में इतना कम बंध नहीं होता, अधिक ही होता है ।

2) मोहनीय का एक-स्थानीय लतासमान अनुभाग का उदय होता है । इससे पूर्व द्वि-स्थानीय अनुभाग का उदय चलता था ।

3) मोहनीय का स्थिति-बंध संख्यात वर्ष प्रमाण प्रारंभ होता है । इसके पूर्व असंख्यात वर्ष प्रमाण स्थिति-बंध हो रहा था । स्थितिबंधापसरण के माहात्म्य से अब यह घटकर संख्यात वर्ष मात्र रह जाता है ।

अंतरकरण के पश्चात् 7 विशेष कार्य

5) संज्वलन लोभ का अन्य किसी प्रकृति में संक्रमण नहीं होता । अंतरकरण के पूर्व संज्वलन लोभ का भी बध्यमान पुरुषवेद तथा तीन संज्वलन में संक्रमण होता था । अब वह नहीं होता ।

6) यहाँ से आयुक्तकरण संक्रमण की विधि प्रारंभ होती है । आयुक्तकरण संक्रमण याने संक्रमण करके क्षय करना ।

आयुक्तकरण – नपुंसकवेद की क्षपणा में महा-उद्योग से युक्त होता है इसलिए आयुक्तकरण कहते हैं ।

7) अभी तक बध्यमान सर्व कर्म – ज्ञानावरण आदि एवं मोहनीय की एक अचलावली बीतने पर उदीरणा होना संभव थी । परंतु यहाँ से आगे अब बंध से 6 आवली बीतने के पश्चात् ही उदीरणा होना संभव होगा । 6 आवली से एक समय भी कम होने पर उस समयप्रबद्ध की उदीरणा संभव नहीं है ।

अंतरकरण के पश्चात् 7 करण

- मोह
  - अनुभाग
    - बंध — एकस्थानीय (1)
    - उदय — एकस्थानीय (2)
  - स्थिति-बंध
    - संख्यात वर्ष (3)
  - संक्रमण
    - आनुपूर्वी (4)
    - असंक्रमण — संज्वलन लोभ (5)
  - आयुक्तकरण
    - नपुंसकवेद (6)

(7) 6 आवली पश्चात् ही बध्यमान समयप्रबद्ध की उदीरणा

संछुहदि पुरिसवेदे, इत्थीवेदं णउंसयं चेव ।
सत्तेव णोकसाए, णियमा कोहम्हि संछुहदि ॥439॥
कोहं च छुहदि माणे, माणं मायाए णियमसा छुहदि ।
मायं च छुहदि लोहे, पडिलोमो संकमो णत्थि ॥440॥

- अन्वयार्थ: (इत्थीवेदं चेव णउंसयं) स्त्रीवेद और नपुंसकवेद को (पुरिसवेदे) पुरुषवेद में (संछुहदि) संक्रमित करता है।
- (सत्तेव णोकसाए) सात नोकषायों को (णियमा) नियम से (कोहम्हि) संज्वलन क्रोध में (संछुहदि) संक्रमित करता है
- (च) और (कोहं) संज्वलन क्रोध को (माणे) संज्वलन मान में (छुहदि) संक्रमित करता है
- (माणं) संज्वलन मान को (णियमसा) नियम से (मायाए) संज्वलन माया में (छुहदि) संक्रमित करता है
- (च) और (मायं) संज्वलन माया को (लोहे) संज्वलन लोभ में (छुहदि) संक्रमित करता है।
- (पडिलोमो संकमो) यहाँ प्रतिलोम (अन्य प्रकार से) संक्रमण (णत्थि) नहीं है ॥439-440॥

आनुपूर्वी संक्रमण

4) अंतरकरण से मोहनीय का आनुपूर्वी संक्रमण प्रारंभ होता है ।

अंतरकरण के पूर्व तक एक मोह प्रकृति का अन्य किसी भी मोह की प्रकृति में संक्रमण हो जाता था ।

परंतु अब क्रमपूर्वक ही संक्रमण होगा । इसे आनुपूर्वी संक्रमण कहते हैं ।

यह क्रम इस प्रकार का होता है –

प्रकृति	किसमें संक्रमित होगी
स्त्री, नपुंसकवेद	पुरुषवेद
पुरुषवेद, हास्यादि 6 नोकषाय	संज्वलन क्रोध
संज्वलन क्रोध	संज्वलन मान
संज्वलन मान	संज्वलन माया
संज्वलन माया	संज्वलन लोभ

- Reference : श्री लब्धिसार टीकासहित अनुवाद – ब्र. सुजाता रोटे, बाहुबली (वर्तमान में आर्यिका श्री शुद्धोहंश्री माताजी)
- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889
- इसी विषय के विडियो लेक्चर हमारे चैनल पर उपलब्ध हैं। आप अवश्य लाभ लें। www.Jainkosh.org/wiki/Videos पेज पर जाएँ एवं लब्धिसार की प्लेलिस्ट चुनें।